जनवरी १९९९

ओ३म्

जनज्ञान

मासिक

अग्निमीडे पुरोहितं....

भयंकर दुर्दशा के काल में भारत के आत्मगौरव को वेदों की पुनर्प्रतिष्ठा द्वारा स्थापित करने वाले महर्षि श्रेष्ठ दयानन्द सरस्वती

अरविन्द गोयल

जनज्ञान के सहयोगी पाठकों से आह्वान्!

कम से कम एक और परिवार में पहुचाएं जनज्ञान

'जनज्ञान' वैदिक संस्कृति, विशुद्ध राष्ट्रवाद तथा सबल समर्थ राष्ट्र के सृजन का प्रेरक माध्यम है। पत्रिकाएं तो सैकड़ों हैं। उनमें से अधिसंख्य विशुद्ध व्यावसायिक हैं, जबकि जनज्ञान एक 'अभियान' का सशक्त स्वर है। विद्यमान सामाजिक, राजनीतिक तथा राष्ट्र से संबद्ध विषयों पर निर्भीक टिप्पणियां जनज्ञान की विशेषता है।

- यह अभियान है आर्य मर्यादा के प्रति जागरण का।
- यह अभियान है हिन्दुत्व के तर्कसंगत पृष्ठ पोषण का।
- यह अभियान है सामाजिक समता भाव के स्फुरण का।
- यह अभियान है देशद्रोही तत्वों से समाज को जगाने का।
- यह अभियान है अपने बिछुड़े बंधुओं को पुनः साथ लाने का।
- यह अभियान है तुष्टिकरण के चक्रव्यूह से राजनीति को छुड़ाने का।
- यह अभियान है कृणवन्तो विश्वमार्यम् के उद्घोष को गुंजाने का।
- यह अभियान है हिन्दुत्व के विश्व बंधुत्वमय स्वरूप को दर्शाने का।
- यदि यह अभियान आपको प्रिय है तो सहयोग का हाथ बढ़ाइये।
- अपने मित्रों, परिजनों में कम से कम एक और जनज्ञान का सदस्य बनाइए।
- यही है परिस्थिति का आह्वान् घर-घर में पहुंचे जनज्ञान
- सामग्री प्रकाशन में आपके सुझाव का होगा स्वागत
- क्योंकि आप हमारे परिजन हैं, नहीं है अभ्यागत

—सम्पादक

दयानंद संस्थान द्वारा प्रकाशित चार नए ग्रन्थ

स्व. पंडित चन्द्रगुप्त वेदालंकार की लोह लेखनी का उपहार

१. बृहत्तर भारत : मूल्य २०० रुपए
विख्यात लेखक और पत्रकार बनारसी सिंह की प्रेरक शैली का प्रतिदान

२. क्रांति यज्ञ के ब्रह्मा भाई परमानंद : मूल्य ३० रुपए

वेदमंत्रों की अंग्रेजी व हिन्दी भाषा में सरल व्याख्या सहित

३. वैदिक प्रेयर (VEDIC PARYER) मूल्य ३० रुपए
सामान्य जन के संध्या-वन्दन का सक्षम माध्यम

४. वैदिक सत्संगपद्धति - मूल्य ७ रुपए

इन चारों पुस्तकों की कुल मूल्य राशि २६५ रुपए २०० रुपए में प्राप्त करें! (डाक से मगाने पर २५ रू. पृथक होंगे।)

* * *

दयानन्द संस्थान २२८६ आर्य समाज मार्ग, करोल बाग, नई दिल्ली -५ फोन : ५७२४७४१, ५८१५४५७

॥ ओ३म् ॥

जनज्ञान

वेद
ऋक् यजु साम अथर्व

कृण्वन्तो विश्वमार्य्यम्

दयानन्द संस्थान
नई दिल्ली का प्रकाशन

हिन्दूराष्ट्र स्थापना हेतु संघर्ष करो

कार्यालय
2286 आर्य समाज मार्ग, करोल बाग,
नई दिल्ली-110005
दूरभाष : 5724741, 5815457

प्रधान कार्यालय
वेद मन्दिर, महात्मा वेदभिक्षुः सेवाश्रम
लेखरामनगर (इब्राहीमपुर) पो. मुखमेलपुर
दिल्ली-36, दूरभाष : 7202249

संस्थापक : स्वर्गीय महात्मा वेदभिक्षुः

सम्पादक : पंडिता राकेश रानी
सह-सम्पादक : दिव्या आर्य
वार्षिक शुल्क-80 रु० आजीवन-501 रु०
एक प्रति - 8 रुपये
विदेश में वार्षिक शुल्क 350 रु.
आजीवन 5001 रु.
नवम्बर 1999 वर्ष 33 अंक : 7

सम्पादकीय

नेत्र खोल कर देख विश्व रे, दीप नहीं ये प्राण जले हैं।

उत्सव धर्मी है अपनी पावन संस्कृति। अनेक पर्वों के परिपालन की है इसकी परम्परा। पर्व भी ऐसे कि आज विभिन्न मत-मतान्तरों, पंथ-संप्रदायों में विभाजित इस विश्व की सर्वाधिक प्राचीन आर्य जाति को, जो कालचक्र के प्रवाह में अब संसार में 'हिन्दू' के रूप में सम्बोधित की जाती है, विभिन्न वर्गों के अन्तस में निहित एकता के अमृत तत्व की अनुभूति कराते हैं। इन महान पर्वों में से एक का आंग्ल कालदर्शिका के अनुसार अक्तूबर मास में सोल्लास आयोजन हुआ और दूसरे का इस माह (नवम्बर) में हो रहा है। गत माह विजयदशमी पर्व आयोजित हुआ और इस माह दीपावली महापर्व वैदिक संस्कृति की पावन धारा के अवगाहन करने वाले प्रत्येक जन द्वारा आर्यावर्त, हिन्दुस्थान अर्थात् भारत वर्ष में ही नहीं अपितु विश्व भर में संपन्न किया जा रहा है। इसे भी एक प्रेरक संयोग ही कहा जा सकता है कि ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम से विजयादशमी पर्व संबंधित है तो दीपोत्सव से भी उनका अटूट नाता है। यह संदर्भ इस मर्म को भी प्रतिपादित करता है कि असत्य पर सत्य, अन्याय पर न्याय, पाशविकता पर मानवता की विजय के बाद ही तम पर आलोक (अंधेरे पर प्रकाश) की वर्चस्वी स्थिति का द्योतक दीपोत्सव संपन्न हो पाता है। विजयादशमी के समान दीपमालिका पर्व इस परम पुनीत भारत भूमि, आर्यावर्त, हिन्दुस्थान में बसा वह प्रत्येक नागरिक सोत्साह मनाता है, जो इसे मातृभूमि, पितृभूमि और पुण्यभूमि के रूप में वंदनीय मानता है, जो वेद के महान आह्वान 'भूमाभूमि पुत्रोऽहम् पृथिव्या' से प्रेरणा पाता है। यों इस सांस्कृतिक सरिता में अवगाहन कर स्वयं को धन्य मानने वाला विश्व के किसी भी कोने में बसा हर जन ही दीपमालिका पर्व पर अपने निवास में दीपवर्तिकाएं सजाता है।

दीपोत्सव जिन श्रीराम से, ऐतिहासिक दृष्टि से संबद्ध माना जाता है, उनकी गुण, गरिमा के गायकों ने, जो इस पर्व का नाता श्रीराम के लंकाधिपति पर विजय प्राप्त कर अयोध्या पुनरागमन से जोड़ते हैं, उनके प्रति श्रद्धा की अभिव्यक्ति हेतु उन्हें विभिन्न विशेषणों से महिमा मंडित किया है। किसी ने उन्हें सूर्यवंश प्रभाकर की संज्ञा प्रदान की तो किसी ने उन्हें अखिल आर्य निषेवितपाद पद्म साकेताधीश्वर कह कर सम्बोधित किया है। किसी के लिए वह दशरथा

मुद्रक, प्रकाशक व सम्पादक : पंडिता राकेश रानी 2286 आर्य समाज मार्ग, करोल बाग, नई दिल्ली-110005 द्वारा डीलक्स आफसेट प्रिन्टर्स 305/4 शहजादा बाग दिल्ली में मुद्रित एवं प्रकाशित।

न्दवर्धन है तो किसी ने उन्हें जानकी जीवन माना है। किसी ने उन्हें सुग्रीव-सुहृद कहकर सम्बोधित किया है तो किसी को एक व्यकुल दीपक के रूप मे भाए हैं। मर्यादाओं के प्रेरक प्रकाश मे स्वजीवन दीप को आलोकित कर श्रीराम महिमा मंडित हुए। जगद्श्रुत हुए। उनका प्रकाश मे मंडित जीवन वृत्त इस तथ्य का साक्षात्कार कराता है कि वह एक ऐसे युग-पुरुष थे कि जो मानवीय मूल्यों के लिए सतत संघर्षरत रहे, जो सामाजिक चेतना मे परिपूर्ण थे, अगाध ज्ञान सागर मे आप्लावित थे। गहन यातना मे आकंठ डूबे इतिहास के निर्णायक मोड़ पर स्थित एक महान व्यक्तित्व के रूप में उभरे श्रीराम अपने समय के सर्वोच्च शिखर पर आरूढ़ महामानव के रूप में लाखों वर्षों से जन-गण की श्रद्धा और आस्था का केन्द्र बने हुए हैं। उनका वह भव्य व्यक्तित्व इतिहास के पृष्ठों में गरजता हुआ जन-मानस में रचा बसा है।

श्रीराम की जीवन गाथा करूणा और वेदना से परिपूरित है। वह एक ऐसा प्रेरक दीपक है जो अतीत से प्रेरणा प्राप्त कर वर्तमान की आपदाओं को झेलते और ठेलते हुए संघर्ष रत उस प्रत्येक मानव को कर्मपथ पर अग्रगामी होने के लिए निराशा के निबिड़ अंधकार में भी आलोक पथ दर्शाता है, जो स्वराष्ट्र और मानवता के समुज्ज्वल भविष्य के सृजन हेतु कर्मरत है। उनका दर्द, उनकी वेदना व्यक्तिगत नहीं, निजी नहीं। यदि उनकी यह वेदना निजी होती, वह अपने जीवन दीप की ऊर्जा का उपयोग मात्र अपने लिए ही करते तो संभवतः इतिहास में वह अमर स्थान कदापि प्राप्त नहीं कर पाते जो उन्हें प्राप्त है। श्रीराम की वेदना गहन सामाजिक वेदना है। इतिहास साक्षी है कि विश्वामित्र सरीखे ज्ञान-आगार आचार्य ने भी उन्हें शिरस्त्राण बनाया है। शिक्षा के बहाने उन्होंने श्रीराम को इसलिए अपने शिष्य के रूप में चुना, जिससे वह अपने यज्ञ को निर्भयता सहित पूर्ण कर सकें। श्रीराम ने सुबाहु और ताड़का वध भी व्यक्तिगत वैर भाव अथवा स्वार्थ साधना हेतु नहीं अपितु जगत् के हित साधन को दृष्टिगत रखकर ही किया।

उनके जीवन की प्रेरक संघर्षगाथा में सर्वाधिक तीखा मोड़ उनके राज्याभिषेक की घोषणा के तत्काल बाद उस क्षण आया था, जब एक ओर राज्य सिंहासन पर उनके आरोहण हेतु मंगलमयी शहनाइयों की मृदुल ध्वनियों से समग्र अयोध्या नगरी आनन्दित थी। तभी हुआ सहसा ही अद्भुत सा पट परिवर्तन। कालचक्र ने तभी लिया था वह मोड़ कि सिंहासन की ओर पग धरने के बजाए उन्हें चौदह वर्ष के लिए वन गवन का पितृ आदेश मिल गया था। किंतु विधि के इस अनोखे व्यंग्य पर भी श्रीराम के मुख पर न तो विषाद की रेखाएं उभरी थीं और न ही आक्रोश भाव का ही कोई चिन्ह उभर पाया था। आदि कवि महर्षि वाल्मीकि के शब्दों में (आहूतस्याभिषेकाय) राज्याभिषेक के लिए बुलाए गए और वन के लिए विदा किए गए। परन्तु मुनि वशिष्ठ ने श्री राम की मुख कांति पर कोई अंतर नहीं पाया।

वस्तुतः निष्काम, कर्मवीर का यही होता है चरित्र, जो विश्व को इस तथ्य से अवगत कराता है कि महापुरुषों का जीवन दीप अपनी प्राण वर्तिका जन-गण मंगल हेतु प्रदीप्त करता है। वह जीवन बाती तिल-तिल कर जलकर मानव समाज के कल्याण पथ हेतु प्रकाश की किरण उमगाती है। क्योंकि वेद प्रदर्शित पथ का अनुगामी इस सत्य को अपने जीवन वृत्त मे उजागर करता है कि आज ही मृत्यु आ जाए या युगान्तर के पश्चात् आए, निष्काम कर्मवीर अपने पथ पर बढ़ने के काम को विराम नहीं देते और न ही उससे विचलित होते हैं। अपने मुख मंडल पर अनुकूल और विपरीत हर स्थिति और परिस्थिति में, मुस्कान सहित वे कर्त्तव्य निर्वाह में रत रहते हैं। श्रीराम के वनवास की व्यथा-कथा में तेरह वर्षों का विस्तृत विवरण न होने के बराबर है। उनकी वनवास अवधि का चौदहवां वर्ष संघर्ष और घोर तपश्चर्या का रहा। इस वर्ष में ही अपनी जीवन संगिनी सहधर्मिणी सीता के हरण की घटना ने श्रीराम को नितांत व्यथित किया। किंतु उनका प्रेरक जीवन वृत्त दर्शाता है कि वह व्यक्तिगत व्यथा में डूबकर ही नहीं रह जाते अपितु वियोग के अश्रुओं से नहाकर उनकी चेतना और अधिक दीप्तियुक्त हो जाती है। वे दुर्दान्त, अहंकारी, आर्य मर्यादाच्युत मतांध लंकाधिपति रावण की आसुरी सत्ता और अन्याय को चुनौती देते हैं। किंतु इस क्रिया-प्रतिक्रिया में भी मर्यादा पालन से विमुख नहीं होते। वह लंका पर अचानक आक्रमण नहीं करते अपितु अंगद और हनुमान को भेजकर पहले उसे चेतावनी देते हैं। परन्तु जब उन्हें क्रूर और शक्ति के दर्प से आप्लावित दंभी तथा प्रकांड पांडित्य के गर्व से दर्पित होकर मर्यादा-च्युत जीवन व्यतीत करने वाला रावण सही राह पर आता दिखायी नहीं देता तभी श्रीराम अपने धनुष की प्रत्यंचा पर बाण चढ़ाते हैं। महान वीर अंगद, सुग्रीव, जाम्बवंत तथा हनुमान के नेतृत्व में गठित वानर (बंदर नहीं) जातीय योद्धाओं की सबल सेना को संघर्ष पथ पर अग्रसर करते हैं। और फिर महापराक्रमी राक्षस संस्कृति के अनुगामियों के समृद्ध साम्राज्य का विध्वंस कर वहां अपनी विजय वैजयन्ती फहराते हैं। लंका पर विजय पताका फहराने के उपरांत श्रीराम वहां अपना आधिपत्य स्थापित नहीं करते अपितु रावण के अनुज धर्मपरायण और मर्यादा पालक तथा सांस्कृतिक मूल्यों के अनुव्रती विभीषण को ही प्रजा पालन कार्य हेतु सिंहासन पर अधिष्ठित करते हैं।

भारत की उत्तरी और दक्षिणी धुरी को मिलाकर अखंड भारत के सृष्टा श्रीराम महान जननायक के रूप में विश्व की सर्वोच्च उपाधि "मर्यादा पुरुषोत्तम" से इसीलिए महिमा मंडित हुए क्योंकि अपने सम्पूर्ण जीवन में उन्होंने कहीं भी मर्यादा का उल्लंघन नहीं किया। उन्हीं श्रीराम के वनवास की अवधि के समापन के उपरान्त अयोध्या पुनरागमन की प्रेरक स्मृतियां इस दीपमालिका के प्रेरक पर्व से जुड़ी हैं - जिसके अवसर पर जहां श्रीमंत जन अपनी-अपनी भव्य अट्टालिकाओं में विद्युत छटा को आलोकित करते हैं तो ग्राम का कृषक और दो जून की रोटी जुटाने के लिए अहर्निश श्रमरत श्रमिक भी अपनी कुटिया में माटी के दीप जलाकर उस मर्यादा पुरुषोत्तम का स्मरण कर स्वयं को धन्य मानता है - जिसे महर्षि वाल्मीकि ने **"रामो विग्रहवान धर्मः"** अर्थात् श्रीराम धर्म की साक्षात् प्रतिमूर्ति हैं कहकर श्रद्धा ज्ञापन किया था।

इस अंक में पढ़ें

(आवश्यक नहीं कि सम्पादक लेखकों की रचनाओं में अभिव्यक्त सभी विचारों से पूर्णतः सहमत हो।)

सम्पादकीय	१	एक दीप बुझ गया : जला हजारों बातियां—*शिवकुमार मिश्र*	२३
सामयिक विचार	४	एक और जनादेश—*श्याम माथुर*	२५
महात्मा वेदभिक्षु: की अमरवाणी	५	पुरातन भारतीय राजाओं का इतिहास—*ज्ञानचन्द्र*	२७
आपके पत्र	६	विश्व को भारत की देन—*विश्वम्भर प्रसाद गुप्त बंधु'*	३०
पोपवाद और भारत—*नरेन्द्रमोहन - संसद सदस्य*	८	सच्ची तपस्या	३३
ऋषि निर्वाणोत्सव पर विशेष—*स्व. श्री आचार्य रामदेव जी*	१२	एक आर्य समाज का अभिनव वार्षिकोत्सव	३४
स्वामी दयानंद और उनका राष्ट्रवाद —*देवेन्द्र कुमार "विद्याविशारद"*	१६	अरोग्य वरदायिनी तुलसी	३६
नारी उद्धारक देव दयानंद-(१)—*डा. वसुन्धरा रिहानी*	१८	गायत्री का महत्व—*स्वामी समर्पणानंद*	३८
महर्षि दयानंद की जीवन यात्रा का अंतिम चरण —*दिव्या आर्य*	२०	शिवाजी की मातृभक्ति—*दीनानाथ सिद्धान्तालंकार*	४७
		स्व मन्तव्यामन्तव्य प्रकाश —*स्वामी दयानंद सरस्वती*	४१
		समाचार दर्शन	४६

इसी दीपमालिका पर्व का संबंध हमारे पौराणिक बंधु नरकासुर और विष्णु तथा लक्ष्मी और गणेश से जोड़ते हैं। उनके वंदन स्तवन में गणेश, लक्ष्मी और विष्णु की प्रतिमाओं की प्रतीकात्मक भाषा को यदि पढ़ने का प्रयास किया जाए तो यही तथ्य उभर कर सामने आता है कि नरकासुर अर्थात् अभाव, अन्याय और असत्य की प्रवृत्तियों के दमन और शमन से गण का ईश राष्ट्र को समृद्धि (लक्ष्मी) का साक्षात्कार करा पाता है और तभी सत्य अर्थों में शासन (विष्णु) लोक कल्याण के दायित्व को सफलता सहित निर्वहन कर पाता है। राष्ट्र संवर्धन के इस पथ पर चलकर जिन महापुरूषों ने अपनी प्राणवर्तिकाएं मातृ मंदिर में सजाई हैं, 'तमसोमाज्योतिर्गमय' के वैदिक आह्वान् को अपने कर्म कौशल में उतारा है, भारतीय इतिहास ने उनमें से अनेक का पुण्य-स्मरण इस आलोक पर्व से अविच्छिन्न और अभिन्न कर दिया है।

जैन ग्रन्थों के अनुसार 'भगवान महावीर' ने कार्तिक कृष्ण पक्ष की अमावस्था (दीपावली) के दिन ही निर्वाण पाया था। इसी दिन सिख पंथ के सप्तम गुरू हरगोविन्द राय अपने ५२ सहयोगियों सहित ग्वालियर दुर्ग से मुक्त होकर अमृतसर पधारे थे। विभ्रान्त मानवता को सत्य-पथ का दर्शन कराकर धरा-धाम में व्याप्त अज्ञान के गहन तिमिर को विदीर्ण करने हेतु 'सत्यार्थ प्रकाश' सा अमर ग्रन्थ मानव मात्र के पथ प्रदर्शन हेतु प्रदान करने वाले देव दयानंद ने भी दीपमालिका के पावन पर्व पर ही अपनी नश्वर काया का परित्याग कर महाप्रयाण किया था। आर्य जाति अपनी महान संस्कृति, गौरव, इतिहास, परम्परा और धर्म के सत्य स्वरूप को विस्मृत कर अज्ञान के गहन अंधकार में संतप्त थी, निराशा के उस तिमिर को उस कर्मयोगी ने अपने जीवन दीप तथा वेद ज्ञान के प्रेरक प्रकाश को विस्फारित कर चुनौती दी। उस कर्मकौशल के धनी राष्ट्रोद्धारक के जीवन का एक वैशिष्ट्य यह भी था कि वह जितना वेदभक्त था, उससे कम राष्ट्रभक्त भी नहीं था।

आज फिर से मत, पंथ और संप्रदाय के आधार पर मतभेदों को उभार कर विध्नकामी देशी और विदेशी शक्तियां पुनः राष्ट्र जीवन में वैषम्य और वैमनस्य का विष घोलने हेतु अपनी पूरी शक्ति से सक्रिय हैं। राष्ट्र के निर्धन और सामान्य जन का ईमान खरीदने वाले विदेशी व्यापारी धर्म ध्वजी बनकर, स्वर्ण मृग से चोले और चोगे ओढ़कर राष्ट्र निष्ठा और संस्कृति की सीता का अपहरण करने हेतु लोकतांत्रिक विद्या को अपने शासन शैली के रूप में अंगीकार करने वाले इस राष्ट्र द्वारा अंकित राजनयिक लक्ष्मण रेखा का उल्लंघन करने को आतुर और सक्रिय हैं।

इस स्थिति में यह दीपोत्सव, यह ऋषि निर्वाण पर्व उन सभी के लिए एक चेतावनी दे रहा है जिन्होंने देव दयानंद द्वारा प्रदर्शित पावन वैदिक पथ के अनुगमन का संकल्प ग्रहण किया है। स्वदेश में आज वैचारिक पाखंड का अंधकार दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक गहन होता जा रहा है। यह पर्व हमें अपनी प्राण वर्तिका जलाकर समाज का प्रकाश पथ प्रदर्शित करने वाले दयानंद से मिली पाखंड खंडन की विरासत का स्मरण दिला रहा है।

दीपमालिका के इस अवसर पर हम मर्यादा पुरूषोत्तम श्री राम का स्मरण करें, राष्ट्र लक्ष्मी के शृंगार के दायित्व की पूर्ति का व्रत लें और संकल्प ग्रहण करें कि हम ज्योतिर्मय की ज्योति में दीपोत्सव के प्रेरक पर्व पर लीन हुए उस प्रेरणा पुरूष (दयानंद) के प्रति मात्र शाब्दिक श्रद्धा ज्ञापन ही नहीं करेंगे, उसके स्वप्नों की धरोहर की चर्चा मात्र करके ही अपने कर्तव्य की इतिश्री नहीं मान लेंगे अपितु संकल्प का दीप प्रज्वलित कर राष्ट्र का पथ आलोकित करने का दायित्व निभाएंगे। ☐

सामयिक विचार

राष्ट्रपति का अभिभाषण

राष्ट्रपति डा. के.आर. नारायणन ने तेरहवीं लोकसभा के प्रथम सत्र का उद्घाटन करते हुए अपने अभिभाषण में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबन्धन सरकार की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र में कामकाज की प्राथमिकताओं को स्पष्ट करने के साथ-साथ उन चुनौतियों का भी जिक्र किया है जो हमारे सामने मौजूद हैं और जिनका मुकाबला करना लोकतांत्रिक व्यवस्था को मजबूत करने के लिए आवश्यक है। राष्ट्रपति ने देश में गरीबी उन्मूलन, सामाजिक भेदभाव को मिटाने, देश को आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ करने के लिए सरकार की वचनबद्धता प्रकट की है वहीं देश के समक्ष उपस्थित बाहरी और आन्तरिक संकटों का भी जिक्र किया है जो हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था को छिन्न-भिन्न करने में लगे हैं। यह संतोष का विषय है कि स्पष्ट बहुमत के आधार पर बनी नई सरकार कई महत्वपूर्ण मुद्दों पर राष्ट्रीय सहमति के आधार पर काम करना चाहती है जिनमें राजनीतिक भ्रष्टाचार की समाप्ति, संघीय शासन व्यवस्था को अधिक मजबूत करने, चुनाव प्रणाली में बुनियादी सुधार, केन्द्र-राज्य सम्बन्धों को मधुर बनाने जैसे महत्वपूर्ण और बुनियादी मुद्दे शामिल हैं। सरकार ने लोकपाल विधेयक में प्रधानमंत्री पद को भी कानून के दायरे में लाने की घोषणा की है। यह आज के माहौल में बहुत जरूरी हो गया है क्योंकि राजनीति को पारदर्शी बनाना लोगों की लोकतांत्रिक व्यवस्था में गहरी आस्था पैदा करने के लिए आवश्यक है।

देश के सामने उपस्थित आर्थिक समस्याओं के निवारण का जिक्र पिछले सभी अभिभाषणों में किया जाता रहा है लेकिन इस दिशा में पिछले ५० वर्षों में जो प्रगति हुई है उसे संतोषजनक नहीं माना जा सकता। नई सरकार ने गरीबी, बेकारी व आर्थिक असमानता को दूर करने के लिए आर्थिक विकास कार्यक्रमों की प्राथमिकताओं का विस्तार से जिक्र किया है। वैसे तो राजग के साझा कार्यक्रम में इन बातों का उल्लेख था लेकिन अब राष्ट्रपति के अभिभाषण में उनका जिक्र आने से सरकार की जवाबदारी और बढ़ गई है।

राष्ट्रपति के अभिभाषण में कुछ अन्य महत्वपूर्ण और बुनियादी संवैधानिक मुद्दे भी उठाए गए जिनमें लोकसभा व विधानमंडलों का कार्यकाल पांच वर्ष तक निर्धारित करने के सुझाव भी शामिल हैं। राष्ट्रपति ने देश के संविधान के कामकाज के पचास वर्षों के अनुभवों का अध्ययन करने और अगली शताब्दी की चुनौतियों से निबटने के उपाय सुझाने के लिए आयोग गठित करने की घोषणा की है। ये बुनियादी प्रश्न हैं जिन पर आज की स्थिति में सरकार कोई अन्तिम फैसला करने की स्थिति में नहीं है। इन मुद्दों पर व्यापक स्तर पर बहस आवश्यक है जिससे आम सहमति प्राप्त की जा सके। जिन आर्थिक और बुनियादी लोकतांत्रिक मुद्दों का जिक्र अभिभाषण में किया गया है उन पर वाजपेयी पिछले कई महीनों से चर्चा करते रहे हैं। जहां तक आर्थिक विकास का सवाल है वे सीधे जनता से जुड़े हुए हैं और नई सरकार की प्रतिबद्धता का परीक्षण उनकी क्रियान्विति से ही होगा। आजादी के बाद जितनी भी सरकारें देश में बनी हैं, जिनमें एक दलीय और गठबन्धन सरकारें भी शामिल हैं, उन्होंने हर मौके पर गरीबी उन्मूलन और देश के तेज आर्थिक विकास की लम्बी-चौड़ी बातें कहीं लेकिन आर्थिक असमानता व गरीबी उन्मूलन के प्रश्न पर कोई उल्लेखनीय प्रगति नहीं हुई। इस दृष्टि से नई गठबन्धन सरकार के सामने बड़ी चुनौती आई है, उसका मुकाबला यदि सफलतापूर्वक नहीं किया गया तो लोगों की इस सरकार में और लोकतांत्रिक व्यवस्था में ही विश्वास डिगने लगेगा। सरकार को इस बात पर विशेष ध्यान रखना होगा कि यह अभिभाषण भी कहीं पहले के अभिभाषणों की तरह केवल औपचारिकता बन कर न रह जाए। महिलाओं को ३३ प्रतिशत आरक्षण का उल्लेख भी राष्ट्रपति के अभिभाषण में किया गया। महिलाओं को आरक्षण देने के प्रश्न पर सरकार की नीयत तो साफ लगती है लेकिन उसे इस प्रश्न पर विपक्ष के साथ भी सहमति बनानी पड़ेगी। आर्थिक क्षेत्र में जो भी विधेयक विचारार्थ पड़े हैं उन पर तत्काल कार्यवाही की जरूरत है। ऐसे मामलों में अनावश्यक विलम्ब सरकार की विश्वसनीयता पर प्रश्नचिन्ह लगाने वाले होंगे।

राष्ट्रपति ने अपने भाषण में पड़ोसी पाकिस्तान में सैनिक शासन की स्थापना पर चिन्ता व्यक्त की है। हालांकि यह पाकिस्तान का आन्तरिक मामला है। सैनिक सरकार सीमा पार से आतंकवाद को रोकना चाहती है या नहीं। वहां लोकतंत्र की बहाली की दिशा में वह क्या कदम उठाएगी? इन प्रश्नों पर दोनों देशों के सम्बन्ध निर्भर करते हैं लेकिन राष्ट्रपति ने पाकिस्तान को आतंकवाद को समाप्त करने की चेतावनी देकर भारत की जनता की भावना को उजागर किया है। यह भी संतोष की बात है कि केन्द्र सरकार दुनिया भर में आतंकवाद को जड़ मूल से समाप्त करने के लिए सभी देशों के साथ मिलकर प्रयास करना चाहती है। आज दुनिया में भारत की प्रतिष्ठा बढ़ी है और पाकिस्तान की भारत के खिलाफ शत्रुतापूर्ण कार्यवाही के सम्बन्ध में भारत के दृष्टिकोण को अधिक सही ढंग से समझा गया है। राष्ट्रपति के अभिभाषण से यह स्पष्ट संकेत मिलता है कि सरकार अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में अपनी भूमिका को ज्यादा कारगर ढंग से निभा पाएगी। नई लोकसभा में राष्ट्रपति के अभिभाषण से सरकार की प्रतिबद्धता झलकती है। निःसन्देह सरकार के सामने देश और विदेश में बड़ी चुनौतियां हैं। उनका मुकाबला करने के लिए दृढ़ इच्छा शक्ति जरूरी है।

(राजस्थान पत्रिका से साभार)

महात्मा वेदभिक्षु की अमर वाणी

प्रभु का प्रसाद लेकर आपके द्वार पर आ गया हूं! स्वीकार कीजिए

धरती के प्रत्येक मनुष्य को विना किसी भेद भाव के सुख-शांति और आनन्द की आवश्यकता है। इन तीनों वस्तुओं की प्राप्ति के लिए लिए ही मनुष्य प्रयत्न करता है किन्तु उसे यह मिलते नहीं, मिलती है अशान्ति कष्ट और चिन्ताएं।

सृष्टि के प्रारम्भ में ही प्रभु ने हमें जहां समस्त पदार्थ दिये वहीं भौतिक पदार्थों का उपभोग करते हुए आनन्द, शांति और सुख की प्राप्ति का मार्गदर्शन भी दिया। प्रभु का बताया मार्ग 'वेद' की ऋचाओं द्वारा आज भी मनुष्य को आनन्द-पथ बता रहा है। 'वेद' ज्ञान का सार जिस एक मन्त्र में निहित है ..... जिसका जीवन में धारण समस्त समस्याओं का एकमात्र हल है... .... उसका प्रसिद्ध नाम है -गायत्री मन्त्र'। वैसे तो 'गायत्री', नाम उस छन्द का है, जिस में यह मन्त्र लिखा हुआ है। किन्तु गायत्री शब्द अब जन मानस में गायत्री मन्त्र विशेष का सूचक बन गया है।

-गायत्री की महिमा भारत के गौरव और जीवन की गाथा है। इसका उपदेश जीवन के अणु अणु में आनन्द की जो लहरें प्रवाहित करने की सामर्थ्य रखता है, उसकी उपमा असम्भव नहीं।

'गायत्री' नाम है उस प्रकाश का, जिससे हृदय और मस्तिष्क का अंधेरा मिटता है। 'गायत्री' नाम है उस 'गीत' का, जिसे स्वयं ब्रह्मांड के सूत्रधार ने गाया और जिसे सुन कर मनुष्य का मन "देव" बन प्रकाश पुञ्ज का अभिनव भण्डार बन जाता है।

शिक्षा ग्रहण के लिए गुरु के आश्रम में जब बालक प्रवेश करता था तो उसे सबसे पहला उपदेश इसी मन्त्र द्वारा दिया जाता था। इसलिए इसे "गुरु मन्त्र" भी कहा जाता है। वस्तुतः जीवन क्या है ? जीवन का लक्ष्य क्या है और किन साधनों से हम आनन्द तक पहुंचें, इसकी प्रेरणा की झंकृतियां गायत्री मन्त्र की प्रति मात्रा में झंकृत हैं।

धरती के प्रत्येक मनुष्य के मन मस्तिष्क तक 'वेद' का संदेश पहुंचाने के महर्षि दयानन्द के आदेश पालन का गुरुतर भार हम अपने कन्धों पर अनुभव करते हैं। प्रभु हमें शक्ति दें कि हम ज्ञान के गीत गाते रहें, धरती पर गुंजाते रहें। अर्पित है यह 'मांगायत्री' उन ऋषि भक्तों के पवित्र हाथों में, जिनके हृदय में वेद प्रचार-प्रसार के अंकुर विद्यमान हैं।

अंधेरा बढ़ गया है। सर्वनाश के तूफान सिर पर खड़े हैं। मानवता का डोलता सिंहासन हमें बुला रहा है। रक्षा के लिए हम ईश्वर के पुत्र "आर्य" यह गायत्री का संदेश लेकर उपस्थित हैं।

अज्ञान भागो ! भाग जाओ धरती के मत-वादो ! जहर की ज्वाला को बुझाने गायत्री-अमृत आया है। महानाश के गीत गाने वालो ! सुनो..... प्रभु की अमृत वाणी, अब प्यार का संगीत गुंजाओ!

गा, गा, रे मन गा, वह गान जिससे मन का अंधेरा दूर-दूर चला जाए। यमुना की लहरों पर, गंगा की धारा में गान गूंजें गायत्री के, गा वह गीत। अणु-बमों की झुलसाती लपटों का..... मारक अस्त्रों का, राक्षसों की संहारक शक्ति का उपचारक..... प्रभु का सन्देश वाहक गीत गायत्री का गा रे मन ..... गा !

प्रकाश की किरणें लेकर उपस्थित हूं आप के द्वार पर ! शक्ति दो प्रभु कि मेरी यात्रा रुके नहीं। द्वार-द्वार जाकर प्रसाद तुम्हारा मैं बांट सकूं, सोते हुओं को जगाऊं और जागते हुओं को तुम्हारी राह पर चलाऊं..... गायत्री 'मां की प्रेरणा से मैं केवल यही मांगता हूं।

लीजिए आपके द्वार पर भी आ गया हूं..... प्रभु का प्रसाद लेकर - स्वीकार कीजिए। — भारतेन्द्र नाथ

(जून १९७६ "माँ गायत्री" से)

आपके पत्र

स्वामी विवेकानन्द और वेद

महोदया,

एक दैनिक पत्र में स्वामी विवेकानन्द का एक कथन उद्धृत किया गया है :— "केवल वेदों का अध्ययन ही किसी मनुष्य को विद्वान नहीं बना देता।" मेरे लिए स्वामी विवेकानन्द जी के प्रति पूर्ण श्रद्धा रखते हुए भी उनके उपर्युक्त कथन से सहमत होना कठिन है। स्वामी विवेकानन्द ने एक हिन्दू धर्म प्रचारक के रूप में विदेशों में जो कार्य किया है उसके प्रति जितनी कृतज्ञता व्यक्त की जाए वह कम है। फिर भी यह कहने में अतिशयोक्ति नहीं है कि स्वामी जी संस्कृत में लिखित वेदों के विद्वान नहीं थे, भारतीय परम्परा में वेद में लिखित बातों को प्रमाण रूप में मानने की परिपाटी रही है क्योंकि वेद सृष्टि का अनादि ग्रन्थ है, इसे ईश्वरीय वाणी माना जाता है। स्वयं स्वामी विवेकानन्द ने वेदों के नित्यत्व और उसके अपौरूषेयत्व को माना है, परन्तु वेद के विस्तृत और शास्त्रीय अध्ययन के अभाव में वे वेद सम्बन्धी कई भ्रान्तियों के भी शिकार हुए हैं। वेदों में वर्णित विषयों की लम्बी सूची यह बात प्रमाणित करती है कि वेद केवल आध्यात्मिक तत्वों का ही विवेचन करने वाले धार्मिक ग्रंथ ही नहीं बल्कि मानव समाज के कल्याण के लिए सभी ज्ञान-विज्ञान की विधायें अपने मूल रूप में वेदों में विद्यमान है। योगी अरविन्द भी वेदों में समस्त ज्ञान-विज्ञान सम्बन्धी स्वामी दयानन्द की मान्यता से सहमत थे।

स्वामी विवेकानन्द जी ने मौखिक लिखित रूप से कई ऐसी बातें कही हैं जो परस्पर विरुद्ध हैं। स्वामी विवेकानन्द से वार्तालाप नामक पुस्तक के पृष्ठ - ४८ पर स्वामी जी कहते हैं कि इस संसार में ऐसा कोई सत्य या विद्या नहीं है जो वेदों में न हो। अपने ज्ञान योग नामक ग्रन्थ में स्वामी विवेकानन्द ने लिखा है — "ज्ञान के नाम से जो कुछ समझा जाता है वह वेद में ही है।"

अतः पाठकों को सत्या-सत्य के निर्णय के लिए स्वयं वेदाध्ययन करना चाहिए।

दयाराम पोद्दार

उप-प्रधान, छोटा नागपुर आर्य प्रतिनिधि सभा, राँची

साहसपूर्ण जीवन रक्षक धागा

परम पूज्य, बहन राकेश रानी जी, सादर नमस्कार

आपका वार्षिक आशीर्वाद एक साहसपूर्ण जीवन रक्षक धागा मेरे लिए जीवन ज्योति है।

आप के द्वारा संरक्षण कार्य के सूत्र समाज में प्रदान कर रहे हैं। रक्षाबंधन पर आप का भेजा हुआ "धागा" मेरे लिए आगामी वर्ष तक कवच बना रहता है। धन, साधन और योगदान का इतना महत्व नहीं जितना आप अपने प्रत्येक सांस के प्रवाह से समाज का कल्याण कर रही हैं। आप का पत्र मेरे परिवार में पूजास्थल का प्रहरी रहता है।

मेरा सम्पूर्ण परिवार आप के पुनीत आशीर्वाद से लाभान्वित है।

करनसिंह वर्मा

२२९-हीरालाल बिल्डिंग, बेगमबाग, मेरठ — २९०००१

यह कैसा विपर्यास

आदर्णीया बहन जी, सादर नमस्ते,

मेरे एक मित्र ने मुझे एक दैनिक का कटा हुआ भाग दिखलाया जिसमें हमारे एक "शंकराचार्य" ने अपना मत प्रकट किया था "सोनिया गांधी को विदेशी मूल का कहना भूल"। इसी पर उन्होंने अपनी टिप्पणी भी दी थी। मैं यह नहीं समझ पाया, कि किसी भी पीठ का शंकराचार्य, जो अच्छा विद्वान होने के बाद इस पद पर आसीन होता है, कैसे इस तरह का बयान जारी कर देता है। मैं समझता हूँ कि श्रीमती सोनिया गांधी भी इस बात से इन्कार नहीं कर सकतीं कि वे इटालियन मां बाप की इटली में पैदा हुई संतान हैं व इटालियन मूल की हैं। यह सिद्ध है कि श्रीमती सोनिया गांधी विदेशी मूल की हैं और अब भारतीय नागरिक बन गयी हैं। उनका विदेशी मूल का होना एक सत्य है और किसी भी बड़े-छोटे व्यक्ति द्वारा इसके विपरीत कहना एक असत्य है।

रुद्रनाथ सिंह

.प्रधान आर्य समाज कप्तानगंज, बस्ती (उ.प्र.)

आर्य जागृति का सशक्त माध्यम

आदरणीया माताजी, सादर नमस्ते!

'जनज्ञान' द्वारा समस्त आर्य जाति को जागृत करने का अनुकरणीय प्रयास सार्थक प्रतीत होता है। मेरे परिवार में व कार्यालय में सभी को इसका बेसब्री से इन्तजार रहता है। सारगर्भित लेखों के साथ ही प्रेरक सम्पादकीय व समस्त आर्य हिन्दू जाति के प्रेरणास्पद आन्दोलन की अनुभूति होती है। 'जनज्ञान' को आपका आभार सहित शुभ कामनाएँ देता हूँ।

योगेन्द्र आर्य

ओ३म् भवन, रंगपुर रोड़ नं. ४, डंडबारा, कोटा जं. (राज.)

एक सुझाव

आदरणीय माता जी, सादर नमस्ते

आप कितना महान कार्य कर रही हैं। आपके कार्यों की जितनी प्रशंसा की जाये उतनी कम है।

मेरा आपसे एक विनय है कि आप 'जनज्ञान' के एक अंक में भारत के समस्त निःशुल्क और सःशुल्क गुरुकुलों की एक सूची जारी करने का कष्ट करें। आशा है आप मेरी इस विनय को अवश्य स्वीकार करेंगी। मुझमें वैदिक विचारधारा के प्रसार-प्रचार की उत्कट अभिलाषा है इस संदर्भ में हमें आपके मार्गदर्शन की आवश्यकता है।

कैलाश चन्द

नागदा रोड़ खाचरौंद, उज्जैन (म.प्र.) - ४५६२२४

वेद प्रसार यज्ञ में सहयोग समिधा का आह्वान्

" यज्ञार्थात् कर्मणोन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धन :"

योगेश्वर श्री कृष्ण ने गीता में निर्देश किया है कि-

"यज्ञ" के अतिरिक्त सभी कर्म इस लोक में बन्धनकारक हैं, मुक्ति के विरोधी हैं।

'यज्ञ' क्या है ? " इदन्न मम"- यह मेरा या मेरे लिए नहीं है- इस भावना के साथ समर्पित कर्म का नाम ही "यज्ञ" है।

"वेद का पढ़ना, पढ़ाना सभी आर्यों का परम धर्म है"

विश्व की अबतकप्राप्त पुरातम ग्रन्थ माला चतुर्वेद हैं। वेदों के मन्तव्य व भावना सरल भाव-भाषा में जन-जन तक पहुंचाने का कार्य हमने प्रारंभ किया हुआ है। ३३ वर्षों से हर आंधी, झंझावात, संघर्ष व विरोध के बावजूद हम वेदों का तत्त्व देश-विदेश में प्रसारित करने के यत्न में लगे हुए हैं। आइए इस अनुपम ज्ञान-यज्ञ में आप अपनी भी आहुति प्रदान करें। आत्मशुद्धि, आत्मतृप्ति, आत्म कल्याणार्थ आगे बढ़िए। वैसे तो किसी प्रकार की कोई भी हवि-प्रदान करें, स्वीकार है हमें। पर कुछ योजना निम्नप्रकार प्रस्तुत है। उसमें धन-समर्पण कर्ता महदाशय व्यक्ति को एक सुन्दर, मढ़ने, लायक, प्रेरणाप्रद यश-पत्रक (सर्टिफिकेट) प्रदान किया जाएगा।

वेदार्थ महारथी रू. १,००००/- $ २०००/-

वेद-रत्न रू. ५१,०००/- $ १०००/-

वेद-विभूषण रू. २५,०००/- $ ५००/-

वेद -श्री रू. ११०००/- $ २५०/-

अलंकृत यश-पत्रक उपाधि के साथ चारों वेदों का हिन्दी भाष्य बड़ा सत्यार्थ प्रकाश एवं अन्य उपयोगी साहित्य साथ में प्रेषित किया जाएगा तथा 'जनज्ञान' पत्रिका में प्रशस्ति के प्रकाशन के साथ आजीवन 'जनज्ञान' भेजा जाता रहेगा।

वेदों के प्रसार-विस्तार से ही भारत का उद्धार, हिन्दुस्थान का नव निर्माण होगा।

वेद प्रसारार्थ आपके द्वारा, आप ही के निमित्त, आप ही के प्रतिनिधि—

दयानंद संस्थान, पंडिता राकेशरानी,अध्यक्ष

एवं

स्वामी जगदीश्वरानन्द (आचार्य), डा. धर्मवीर (मंत्री), श्री ज्ञानचन्द्र (विशिष्ट सहयोगी),
श्री वेदप्रकाश सिंह (प्रतिनिधि दयानंद संस्थान - न्यूयार्क)

पोपवाद और भारत

— नरेन्द्रमोहन-संसद सदस्य

रोमन कैथोलिक सम्प्रदाय के धर्मगुरू पोप जान पॉल द्वितीय की भारत यात्रा का विश्व हिन्दू परिषद् द्वारा जो विरोध हो रहा है उसे सही संदर्भ में देखना होगा। यदि इस विरोध को सही संदर्भ में न देखा गया तो अनर्थ हो जाएगा। अनर्थ इसलिए हो जाएगा, क्योंकि तब सारे विश्व को यह संकेत जाएगा जैसे कि हिन्दू समाज और हिन्दुत्व की अवधारणा दूसरी उपासना पद्धतियों के प्रति असहिष्णु है, जबकि सच यह है कि हिन्दुत्व और हिन्दू समाज का किसी भी उपासना पद्धति से न तो कभी कोई विरोध था, न है और न हो सकता है। यदि कोई विरोध है तो उन मान्यताओं, उन कार्यकलापों और उस सांस्कृतिक तथा वैचारिक आक्रमण से जिसका उद्देश्य हिन्दुत्व की मान्यता को ही नष्ट कर देना और एक ऐसी स्थिति उत्पन्न कर देना है जिससे हिन्दुत्व अपनी ही जन्मभूमि, अपनी ही मातृभूमि में तिरस्कृत हो जाए अथवा इतना श्रीहीन हो जाए कि वह दासता का जीवन जीने लगे। निश्चित रूप से इस चेष्टा को सहन नहीं किया जा सकता। जो भी ऐसी स्थिति लाने की चेष्टा कर रहे हैं उनका तो विरोध करना ही होगा। इतिहास इस बात का साक्षी है कि रोमन कैथोलिक पंथ ने अपने मत के प्रचार-प्रसार के लिए भारत पर जघन्य अत्याचार किये हैं। ये अत्याचार कुछ अंशों में आज भी जारी हैं। ये अत्याचार धर्मान्तरण कराने के अधिकार के नाम पर हो रहे हैं- और कुछ इस तरह से हो रहे हैं जैसे कि धर्मांतरण कराना ईसाई मिशनरियों का विशेषाधिकार हो। जो लोग भी धर्मांतरण करा रहे हैं वे कभी अन्तराष्ट्रीय मान्यताओं की दुहाई देते हैं, कभी मानव अधिकारों की और कभी भारतीय संविधान की। भारतीय जनता की दरिद्रता, अज्ञानता और उसके भोलेपन का लाभ उठाकर तथा प्रलोभन और झूठे प्रचार का सहारा लेकर जिस तरह से भारत में ईसाइयत का प्रसार हो रहा है वह चिन्ता की बात है। यह कहना कि ईसाइयत का प्रसार इसलिए हो रहा है, क्योंकि भारतीय समाज में जातिप्रथा सरीखी बुराईयां हैं, समस्या का अति सरलीकरण करना है। यह ठीक है कि भारतीय समाज में गंभीर बुराईयां रही हैं, लेकिन ईसाइयत का प्रसार इन बुराईयों के कारण नहीं हुआ। ईसाइयत के प्रसार के कारण तो वे हैं जिन्हें एक षड्यंत्र के तहत गढ़ा गया और फिर भारत पर थोपा गया।

पोप का स्वागत है, लेकिन . . .

रोमन कैथोलिक पंथ के सर्वोच्च धर्मगुरु पोप का भारत में स्वागत है। यह स्वागत होना ही चाहिए पर तभी जब पोप द्वारा यह स्वीकार किया जाए कि भारत को धर्मांतरण की आवश्यकता नहीं है। ईसाई मिशनरियों से भारत का कोई विरोध नहीं है। यदि पोप और उनके साथी अपनी मित्रता प्रदर्शित करने के लिए भारत आते हैं तो यह राष्ट्र और इस राष्ट्र की जनता उनका सम्मान करेगी, लेकिन यदि वे इस उद्देश्य से भारत आते हैं कि यहाँ ईसाइयत का प्रसार बढ़े तथा धर्मांतरण के माध्यम से उनके अनुयायियों की संख्या बढ़ जाए और हिन्दुत्व अपमानित हो तब फिर उनका विरोध होगा। पोप से तो भारत का कोई विरोध है ही नहीं, विरोध है तो उस पोपवाद से जिसकी आड़ लेकर भारत के वनवासी क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को प्रलोभन देकर तथा उनकी दरिद्रता और भोलेपन का लाभ उठा कर उन्हें ईसाई बनाया जा रहा है। यह कोई छिपी बात नहीं कि चार सौ साल पहले गोवा और उसके आसपास के क्षेत्रों में रहने वाले भारतीयों पर रोमन कैथोलिक पंथ के प्रचारकों ने भीषण अत्याचार किये थे। इस क्षेत्र में रहने वाले लोगों को इतना भयाक्रान्त किया गया कि उन्होंने मजबूर होकर ईसाइयत को अपना लिया। दुर्भाग्य यह है कि आज भी पूर्वोत्तर भारत के क्षेत्रों में काफी कुछ ऐसा हो रहा है। इस क्षेत्र की जनजातियों पर जो अत्याचार हो रहे हैं उन्हें यह कह कर छिपाया नहीं जा सकता कि यह तो वनवासियों और स्थानीय लोगों के बीच परस्पर जातीय विद्वेष का परिणाम है। यह सही नहीं है। वास्तविकता कुछ और ही है। अच्छा यह होगा कि भारत सरकार इस वास्तविकता पर एक श्वेत पत्र प्रकाशित करे। श्वेत पत्र इसलिए प्रकाशित किया जाना चाहिए ताकि सारे विश्व को पता चल सके कि पोपवाद की आड़ में भारत को किस प्रकार की यातनाओं से गुजरना पड़ा है।

भारतीय संस्कृति की मान्यता

भारतीय संस्कृति जिसे विश्व में हिन्दुत्व के नाम से जाना जाता है, उपासना पद्धति की स्वतंत्रता की पक्षधर रही है। भारत ने कभी भी किसी उपासना पद्धति पर

किसी प्रकार का कोई भी प्रतिबंध लगाया ही नहीं। इस संस्कृति की यह मान्यता है कि मानव अपनी मुक्ति के लिए किसी भी मार्ग का अनुसरण कर सकता है, क्योंकि सभी मार्ग अंततः आत्मबोध की ओर जाते हैं। आत्मबोध के सत्य की खोज ही भारत का अभीष्ट था, है और रहेगा। आत्मबोध के प्रति भारत की जो भी मान्यताएं हैं वे प्रत्येक व्यक्ति को यह अधिकार प्रदान करती हैं कि वह अध्यात्म के मार्ग का चयन करने के लिए पूर्ण स्वतंत्र है तथा जिस सत्ता को ईश्वर कह कर वह सम्बोधित करता है उस सत्ता के साथ उसका संबंध नितान्त वैयक्तिक है। क्या है ईश्वर, इस पर चर्चा के लिए भारत ने सदैव अपने द्वार खुले रखे हैं। आज भी ये द्वार खुले हुए हैं। तत्वज्ञान की दृष्टि से भारत के मनीषियों ने कभी भी किसी पर कोई प्रतिबंध लगाया ही नहीं, बल्कि सदैव यह कामना की है कि तत्वज्ञान की खोज में हर व्यक्ति पूर्ण रूप से समर्पित हो जाए। क्या ऐसी मान्यता विश्व के अन्य पंथों अथवा उपासना पद्धतियों की भी है? मानव अपनी मुक्ति के लिए किसी भी मार्ग का वरण कर सकता है, ऐसी घोषणा क्या विश्व के सभी धर्मगुरू कर सके हैं। क्या पोप ऐसी कोई घोषणा करने के लिए तैयार हैं? यदि वे ऐसी कोई घोषणा कर सकें तो इससे समस्त ईसाइयत का तो उपकार होगा ही, साथ ही धर्मांतरण पर एक ऐसा प्रहार भी होगा, जिसकी आज विश्व को आवश्यकता है। ऐसी किसी घोषणा से २१वीं सदी को एक सही संदेश भी जायेगा। निश्चित रूप से अब यह आवश्यक हो गया है कि २१वीं सदी को सहअस्तित्व की सदी बनाया जाये। इस मार्ग में सबसे बड़ी बाधा धर्मान्धता और रूढ़िवाद ही है। आज विश्व में चारों ओर रूढ़िवाद बढ़ रहा है। इस मामले में कोई अपवाद है तो भारत, लेकिन दुर्भाग्य से भारतीय संस्कृति के सहअस्तित्व की जो अवधारणा है वह पूर्ण रूप से तो नहीं, पर आंशिक रूप से तो उपेक्षित हो ही रही है। निःसंदेह इसका लाभ उन विदेशी संस्कृतियों को मिल रहा है जो रूढ़िवाद पर आधारित हैं।

सहअस्तित्व के जागरण में पोप एक अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं और उन्हें इस भूमिका का निर्वाह करना चाहिए, क्योंकि सहअस्तित्व ही मानव को वास्तविक सुख-शान्ति और समृद्धि प्रदान कर सकता है। एक ऐसा आत्मतत्व, एक ऐसी सत्ता जो सर्वव्यापी है उसके कारण ही मानव- मानव के बीच भेद नहीं हो सकता, इस तत्वज्ञान को जब तक स्वीकार नहीं किया जाएगा तब तक सहअस्तित्व का वास्तविक भाव जागृत नहीं होगा, लेकिन दुर्भाग्य यह है कि जो लोग धर्मांतरण के पक्षधर हैं वे सहअस्तित्व के इस मार्ग पर विश्वास नहीं करते उनका तो यह कथन है कि धर्मान्तरण कराना उनका अधिकार है और इसके लिए वे हर प्रकार का प्रचार करेंगे। आखिर इसे कैसे स्वीकार कर लिया जाए? भारत की जनता निर्धन अवश्य है, लेकिन आर्थिक रूप से निर्धन इस जनता को किसी विदेशी तत्वज्ञान की आवश्यकता नहीं है। विदेशी तत्वज्ञान भारत के लिए कितना उपयोगी है कितना नहीं, इस पर एक बहस हो सकती है, लेकिन प्रश्न यह है कि जो नंगा-भूखा है उसे विदेशी तत्वज्ञान चाहिए या आर्थिक समृद्धि?

जो लोग प्रलोभन देकर भारत की निर्धन जनता की भावनाओं से खिलवाड़ करते हैं तथा जो उसकी आत्मा को ही रूपान्तरित करने के लिए प्रयत्नशील हैं उनके साथ यह निर्धन देश कैसा आचरण करे, यह एक बहुत बड़ा सवाल बन गया है। इस सवाल की चर्चा यदाकदा तो होती है, पर राष्ट्रीय स्तर पर कोई सघन चर्चा नहीं हो पाती। आज की विभाजित भारतीय राजनीति जो अपनी सांस्कृतिक चेतना के प्रति उदासीन है और इसके चलते अनेक गंभीर समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं। इस राष्ट्र की मान्यता तो यह है कि सभी सुख से रहें, सभी स्वस्थ रहें, सभी का मंगल हो और सभी ओर शान्ति रहे, पर क्या ऐसी मंगल कामना रोमन कैथोलिक पंथ भी करता है? क्या यह पंथ इस बात को स्वीकार करेगा कि प्रत्येक व्यक्ति को अपना आध्यात्मिक पंथ चुनने का अधिकार है और हर पंथ के द्वारा ईश्वर तक पहुंचा जा सकता है?

भारत का विश्वास

भारत ने सभी धर्मों, पंथों, सम्प्रदायों और आस्थाओं को सम्मान दिया है। जो भी उत्पीड़न से भाग कर यहां आया चाहे वह यहूदी हो या ईसाई, भारतीयों ने खुले दिल से उसे शरण दी और उनकी संस्कृति की रक्षा करने के लिए संघर्ष किया। भारत के अतिरिक्त कौन सा राष्ट्र ऐसा है जहां इस तरह की सहिष्णुता का प्रदर्शन किया गया हो? भारत को धार्मिक सहिष्णुता के उपदेश की कहीं कोई आवश्यकता नहीं है। ऐसे उपदेश की आवश्यकता तो उन्हें है जो धर्मान्तरण कराने की नीति पर चल रहे हैं। भारत का विश्वास तो एक राष्ट्र, एक जन और एक संस्कृति की अवधारणा पर है। इस अवधारणा में रूढ़िवाद के लिए कोई स्थान नहीं है। यह एक ऐसी मंगलमय अवधारणा है जो भगीरथी गंगा की

तरह सतत प्रवाहित हो रही है और जो सभी प्रकार की उपासना पद्धतियों का सम्मान करती है। भारतीय होने का अर्थ ही यह है कि सभी को न्याय मिले और सभी की समृद्धि हो, भले ही उनके रीति-रिवाजों और उनके विश्वासों तथा उनके रहन-सहन में कितना ही अन्तर क्यों न हो। क्या ऐसी परिकल्पना ईसाइयत या अन्य किसी पंथ की भी है? अगर है तो उसे ऐसी घोषणा करनी चाहिए। स्वयं पोप को भी इसकी घोषणा करनी चाहिए। अभी तक तो ऐसी कोई घोषणा उनकी ओर से की नहीं गई कि वे सभी पंथों का पूर्ण रूप से सम्मान करते हैं और उनका यह विश्वास है कि हर पंथ से परमात्मा तक पहुंचा जा सकता है। जिस दिन पोप ऐसी कोई घोषणा करेंगे उस दिन से सारे विवाद समाप्त हो जाएंगे। रोमन कैथोलिक धर्मगुरु के रूप में पोप पहले भी भारत आ चुके हैं। अब वर्तमान पोप भारत आ रहे हैं। इस पर भारत की जनता को कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन वह यह चाहती है कि वर्तमान पोप भारत की भावनाओं को समझें। वस्तुतः बाहर से आने वाले सभी धर्मगुरुओं को यह वास्तविकता समझनी होगी कि भारत की जनता को धर्मांतरण की न तो आवश्यकता है और न ही यह जनता अब स्वीकार करेगी कि उनकी निर्धनता और अज्ञानता का लाभ उठाकर उनकी मान्यताओं को बदलने की चेष्टा की जाए। यहां इस बात को विस्मृत नहीं किया जाना चाहिए कि १९वीं शताब्दी और २०वीं शताब्दी के प्रारम्भ में जब ईसाई मिशनरियों ने धर्मांतरण के द्वारा भारतीय संस्कृति और भारतीय अस्मिता को रूपान्तरित करने की चेष्टा की तथा भारतीय चेतना को अंग्रेज़ियत में ढाला तो सारे भारत में उसका विरोध हुआ - और तो और महात्मा गांधी सरीखे उदारवादी व्यक्तित्व ने ईसाई मिशनरियों के धर्मांतरण कार्यक्रम का विरोध किया तथा बार-बार यह कहा कि भारत की जनता को धर्मांतरण की आवश्यकता नहीं।

विविधता को मान्यता देने का अर्थ

भारत जब तक संस्कृति की बात करता है तो वह विविधता प्रदान वैयक्तिक संस्कृति की बात करता है। विविधता को मान्यता देना भारत की राष्ट्रीय संस्कृति है। भारत विविधता को मान्यता ही नहीं देता, वह उसका इस विश्वास के साथ आदर भी करता है कि कलुषविहीन, स्वार्थविहीन होकर और अहं का पूरी तौर पर परित्याग करने से किसी भी मार्ग से वैयक्तिक ऊर्ध्वारोहण किया जा सकता है। भारत की जो भी मान्यताएं हैं वे श्रेष्ठ हैं अथवा अश्रेष्ठ, इस पर बहस हो सकती है और इस बहस के लिए भारत ने सदैव विश्व के धर्मप्रचारकों को निमंत्रित ही किया है, लेकिन यह बहस तब बिलकुल निरर्थक हो जाती है जब बहस में रूढ़िवाद का प्रवेश हो जाता है तथा बहस तत्व चिंतन पर न हो कर रीति-रिवाजों पर होने लगती है। ध्यान रहे भारत ने सदैव तत्वज्ञान और मतवाद को पृथक-पृथक माना है। तत्वज्ञान के लिए भारत ने जिसे आधार माना है वह है "एकं सत् विप्राः बहुधा वदन्ति।" यह वह सत्य है जिसे हर व्यक्ति को अपनी तरह से देखने का अधिकार है। इसमें किसी की कोई जोर जबरदस्ती नहीं चलेगी। जिसे जो मार्ग उचित लगे वह उसका वरण कर सकता है। आखिर कहां मिलेगी ऐसी उदारता? इस उदार राष्ट्र में यदि विश्व के अन्य देशों के धर्मगुरू आते हैं तो उनका स्वागत तभी होगा जब वे इस उदारता को सम्मान प्रदान करें और धर्मांतरण कार्यक्रमों का परित्याग करें। वस्तुतः अब यह बात बहुत स्पष्ट रूप से समझ ली जानी चाहिए कि धर्मान्तरण के कारण भारत की संस्कृति ही नहीं, भारत की राजनीति भी प्रभावित हो रही है। धर्मान्तरण के कारण भारत में अलगाववाद और उग्रवाद बढ़ रहा है। धर्मांतरण ने भारतमें सहअस्तित्व के दर्शन को क्षति पहुंचाई है। आज जब चारों ओर समन्वय और सहअस्तित्व की बात हो रही है तब फिर धर्मान्तरण कराने की चेष्टा क्यों ? अच्छा यह होगा कि रोमन कैथोलिक पंथ के धर्मगुरु पोप जॉन पाल द्वितीय यह जान लें कि भारत की आवश्यकता क्या है और भारत आज किस मानसिकता में सांस ले रहा है? धर्मांतरण कार्यक्रमों को तत्काल बंद कराने की घोषणा करें।

सम्पादक — दैनिक जागरण

● कैसा जीवन ? ●

किसे पता है, जीवन पथ का अंत कहां, कब होगा?
कौन जानता है, मंजिल का, लक्ष्य कहां पर होगा?
चलते जाना ही जीवन है, रूक जाना ही मृत्यु विराम,
कहां मिलेगा, कौन जानता, जीवन रथ को कब विश्राम।
जो भी हो चलना है हमको, बढ़ना ही सपनों का गीत,
प्यार शान्ति से, प्यार शून्य से, हार नहीं सकता है मीत।
मेरे साथ चलो तुम साथी, आने दो बाधा तूफान,
मृत्यु वरण तक चरण हमारे, रोक नहीं सकता भगवान्।
प्रभु के पथ पर बढ़ना जीवन, प्रभु के रथ पर चढ़ना जीवन,
जीवन के हित लड़ना जीवन, आओ, देखें अपना जीवन।

—महात्मा वेदभिक्षुः

ज्योति बिना जीवन निस्सार

दीप-दीप्त दिव्यता महत्ता, जाने माने सकल जहान।
शौर्य, संघर्ष व साहस, जिसका अनुपम महान॥
भागा तम् दीप देख, छोड़ जीवन की आस।
बैठा छुपकर चुपचाप, दीपक तले रोक सांस॥
तिमिर जहर पीकर, फैलाता पावन प्रकाश।
झंझावातों से जूझ, जगाता आत्म विश्वास॥
पावन पर्व, शुभ कार्य, करते दीप दीप्तमान।
प्रेम, प्रीति प्राण-प्रभा, जिससे है ज्योतिर्मान॥
दीप-दीप की जगमग लौ, नव उल्लास उमंग भरती।
अवनी पर अम्बर की। कल्पना साकार करती॥
दीप घृत बाती का जब तक रहता मेल।
जीव जगत-ज्योति का तब तक चलता खेल
ज्योति बिना निस्सार मनुज जीवन संसार।
अनैतिक कर्म-कराता, दृष्ट दनूठा अंधकार॥
शौर्य संघर्ष, साहस जिसका अनुपम महान।
दीप-दीप्त दिव्यता महत्ता जाने माने सकल जहान

— रा. भ. सिंह

भारतीय गौरव के पुरातन प्रतीक "चतुर्वेद".....

कठिन और दुरूह तो नहीं हैं। वेदों के छिपे गूढ़ रहस्यों को लेखों, प्रस्तावों के द्वारा जन-जन तक पहुंचाने में संलग्न, ३३ वर्षों से हिन्दी भाषी जनगण के सेवार्थ समर्पित—

जनज्ञान (मासिक)

आइए, आगे बढ़िए, अपनी पुरानी कल्पना साकार कीजिए

* * *

वेद पढ़िए, वेदज्ञ बनिए

* * *

जनज्ञान के माध्यम से वेदों में प्रवेश सरल हो जाएगा।

* * *

परिपोषक सदस्य – ११,००० रु. (चारों वेद हिन्दी भाष्य उपहार प्राप्त करें)
सहायक सदस्य — ५,१०० रु. (चारों वेद हिन्दी भाष्य उपहार प्राप्त करें)
साधारण सदस्य — २५०० रु. (स्वामी दयानन्द जीवन चरित्र हिन्दी एवं अंग्रेजी)

दान-प्रदाता को आकर्षक अलंकृत प्रशंसा-पत्रक तथा पुस्तकें भेंट की जाएंगी। 'जनज्ञान' में उनका परिचय प्रकाशित होगा तथा आजीवन 'जनज्ञान' निःशुल्क भेजा जाएगा।

दुरितों को दूर करने व भद्रों को आकर्षित करने के लिए इस महान ज्ञान यज्ञ में भाग लें।

पंडिता राकेश रानी
संपादक "जनज्ञान मासिक"

कार्यालय : २२८६ — आर्य समाज मार्ग, करोल बाग, नई दिल्ली–५ दूरभाष : ५७२४७४१, ५८१५४५७

ऋषि निर्वाणोत्सव पर विशेष

— स्व. श्री आचार्य रामेदव जी

नमककर, जंगलकर और न्यायालयों के बहिष्कार की प्रेरणा सबसे पहले ऋषि दयानन्द ने की थी। उपयोगी और ज्ञानवर्धक यह लेख पाठकों को पसन्द आयेगा क्योंकि आज जिस प्रवाह में हम वह रह हैं उसमें ऋषि के विचार सफल मार्ग दर्शन कर सकते हैं। — सम्पादक

ऋषि किस प्रकार की शिक्षा का प्रचार क्रियात्मक रूप में करना चाहते थे यह बात उनके पत्रों से स्पष्ट हो जाती है। उनकी शिक्षाप्रणाली तो अब आप सत्यार्थप्रकाश में पढ़ ही सकते हैं। उदाहरण के लिए लीजिए।

(क) उदयपुर के महाराणा सज्जनसिंह को एक पत्र में ऋषि ने लिखा :- **"जब कभी राजकार्य से अवकाश मिले तभी व्याकरण आदि शास्त्र, मनुस्मृति के तीसरे अध्याय का अभ्यास कीजिएगा और व्यर्थ समय एक क्षण भी मत गंवाइयेगा। जैसा कि शतरंज हास्य और विनोद आदि में मूर्ख लोग अपना अमूल्य समय खोते हैं। वैसा करना सर्वथा अनुचित है।"**

इस पर कुछ व्यक्ति कह सकते हैं कि यह तो एक राजा को शास्त्र पढ़ने पर उपदेश मात्र है। इसलिए एक उद्धरण और दिया जाता है। महाराजाधिराज-जोधपुर नरेश को चिट्ठी लिखते हुए महर्षि लिखते हैं। **"महाराज कुमार के संस्कार सब वेदोक्त कराइयेगा। २५ वर्ष तक ब्रह्मचारी रखकर प्रथम देवनागरी भाषा पुनः संस्कृत विद्या जो सनातन आर्ष ग्रन्थ हैं जिनको पढ़ने में परिश्रम और समय कम होवे और महालाभ प्राप्त हो। इन दोनों को पढ़ पश्चात् यदि समय हो तो अंग्रेजी में भी जो ग्रामर और फिलोसोफी के ग्रन्थ हैं। पढ़ना चाहिए।"**

महर्षि के दिवंगत होने पर परोपकारिणी सभा के २८ दिसम्बर, १८८३ के प्रथम अधिवेशन में महादेव गोविन्द रानाडे ने ऋषि दयानन्द की स्मृति को स्थिर करने के लिए दयानन्द-आश्रम के उद्घाटन का प्रस्ताव पेश किया, उसको कार्यरूप में परिणत करने के लिए परोपकारिणी सभा के उपमंत्री पं. मोहन लाल विष्णु पाण्डया ने अपील प्रकाशित की थी जिसमें दयानन्द आश्रम का एक उद्देश्य यह बताया गया था कि वेद और वेदांग पढ़ने-पढ़ाने के लिए एक वैदिक पाठशाला नियत की जाय। वेद और वेदांग सुनने और सुनाने के लिए एक व्याख्यान भवन तैयार किया जाए और यह वैदकि पाठशाला ऐसी होवे जिसमें वेद और वैदिक आदि शास्त्र स्वामी जी की प्राचीन प्रणाली से पढ़ाये जायें।"

उपर्युक्त उद्धरणों से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि महर्षि के उत्तराधिकारियों के ऋषि की शिक्षाप्रणाली को क्रियात्मक-रूप देने के क्या विचार और संकल्प थे।

आर्यों के सामने एक समस्या और भी है वह यह है कि यद्यपि महर्षि ने मठाधीशों और गुरूओं के युग में आर्यसमाज में प्रजातन्त्र राज्य की स्थापना की और स्वयं न मठाधीश बने और न किसी को अपना उत्ताधिकारी नियत किया तो भी आर्यसमाज के संगठन में परोपकारिणी सभा एक ऐसी संस्था है जिसके सदस्यों का आर्यप्रजा से कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है, वे चुने नहीं जाते, किन्तु नियत किये जाते हैं और जब तक उनका देहावसान न हो जाय तब तक उनके स्थानापन्न कोई नहीं नियत किये जाते। सत्यार्थप्रकाश के छठे समुल्लास को पढ़ने वाले लोगों को इस बात से आश्चर्य होता है कि जिनका ऋषि के साथ इतना गहरा सम्बन्ध था उन्होंने भी उनके बाद ऐसे संगठन को कैसे जन्म दिया ? किन्तु एक भ्रम भी उनको होता है जो आर्यसमाज के इतिहास से अपरिचित हैं। ऋषि के पत्रों से भी यह बात स्पष्ट है कि वे वैदिकयन्त्रणालय के प्रबन्ध में मुख्य-मुख्य समाजों के हाथ को ही चाहते थे, किन्तु अपने जीवन-काल में वे आर्यसमाजों की शक्ति को केन्द्रित करने का काम न कर सके, परन्तु परोपकारिणी के प्रथम अधिवेशन में ऋषि के परम भक्त और अग्रणी शिष्य महादेवगोविन्द रानाडे ने एकनिम्न प्रस्ताव पेश किया जो सर्व-सम्मति से स्वीकृति हुआ।

"सर्व आर्य समाजों का परस्पर तथा परोपकारिणी सभा से भी व्यवहार बढ़ाने के हेतु आर्यसमाजों के प्रतिनिधियों की एक सभा निर्माण करनी चाहिए और जब तक यह सभा नहीं बनती तब तक आर्यसमाजों के जो-जो प्रतिनिधि परोपकारिणी सभा में

हैं वे ही परोपकारिणी सभा में जो-जो सभासद पद खाली होंगे वे इस प्रतिनिधि सभा के योग्य सभासदों से इस प्रकार पूर्ण किये जावेंगे कि परोपकारिणी सभा के सभासदों में आधे प्रतिनिधि-सभा के लोग होंगे।" इसके साथ ही एक और प्रस्ताव पास हुआ जिसे पं. श्यामजी कृष्णवर्मा ने रक्खा — "सभा के इस वृतान्त की एक-एक प्रति सब आर्यसमाजों को भेजी जावे और उनसे प्रार्थना की जावे कि प्रतिनिधि सभा के लिए सभासद् नियत करने से तथा और कोई नवीन कार्य हो उससे परोपकारिणी सभा को यथाशक्ति याद करावें।"

इन उद्धरणों से आर्यसमाजियों की उपर्युक्त समस्या का समाधान हो सकता है।

ऋषि दयानन्द को अब तक बहुत से लोग संकुचित अर्थों में एक धार्मिक संशोधक ही समझते हैं। बहुत थोड़े लोग जानते हैं कि वे भारत में राजनैतिक विप्लव भी करना चाहते थे। मैंने आर्यसमाजों के नाम एक आवेदन-पत्र भेजा था, जिसमें यह बताया था कि नमक-कर भारत में यदि किसी महापुरूष को सबसे पहिले अखरा तो वह महर्षि थे। जंगलात के कर का प्रतिवाद भी सबसे पहिले ऋषि ने किया। स्वराज्य शब्द तथा उसका विचार भी ऋषि के दिमाग़ की ही उपज थी सरकारी न्यायालयों का बहिष्कार करने पंचायती फैसला करने का आदेश तो आर्यसमाज के उपनियमों में भी है। किन्तु आज मैं यह बताना चाहता हूं कि ऋषि देशी रियासतों को संगठित करके भारत की खोई स्वतन्त्रता को वापस लाने का प्रयत्न कर रहे थे। यह केवल आकस्मिक घटना ही नहीं है कि ऋषि ने सत्यार्थ-प्रकाश उदयपुर में लिखा और परोपकारिणी का प्रधान उदयपुर के महाराणा को बनाया। जिसके वंश ने बड़े कष्ट पाकर भी स्वाधीन भारत के झण्डे को लहराये रक्खा। और भी राजपूताने के राजों-महाराजों को ऋषि शिक्षा देते रहते थे। उस शिक्षा में बहुत से उत्तम सिद्धान्त प्रतीत होते हैं।

(१) एक यह था कि हिन्दू रियासतों के महाराज कुमार देशभक्ति और भारतीय संस्कृति के वायुमण्डल में पलें ताकि वे भारतीय रहें। ऋषि मनोविज्ञान के सिद्धान्त को खूब समझते थे कि संसार पर व्यक्तियों का नहीं पर विचार का शासन है। विचार और भाव ही राष्ट्रीयता के मूल होते हैं। भारतीय वही है कि जिसके भारतीय विचार हों। इस दृष्टि से वे मुसलमानों को भी विदेशी समझते थे, जिस बात को आज भी भारत अनुभव कर रहा है। महर्षि महाराज जोधपुर को एक पत्र लिखते हैं :-

"आप महाराज कुमार की शिक्षा के लिए किसी मुसलमान व ईसाई को मत रखिए, नहीं तो महाराज कुमार भी इनके दोष सीखेंगे और आपकी सन्तान राजनीति को नहीं सीखेंगे न वेदोक्त धर्म की ओर उनकी निष्ठा होगी, क्योंकि बाल्यावस्था में जैसा उपदेश होता है, वही दृढ़ हो जाता है। उसका छूटना दुर्घट है।"

उपर्युक्त उद्धरण से किसी को यह न समझना चाहिए कि ऋषि दयानन्द अपने शिष्य राजाओं को उपदेश देते थे कि वे मुसलमान-प्रजा को धार्मिक स्वतन्त्रता या धार्मिक प्रचार का अधिकार न देवें। हां, वे यह जरूर चाहते थे कि हिन्दू रियासतों की प्रजा आर्य बनी रहे। किन्तु यह कार्य उपदेश से ही करवाना चाहते थे। उनकी प्रजा का यदि कोई हिन्दू मुसलमान व ईसाई बनने पर तुल ही जावे तो ऋषि की यह सम्मति न थी कि उस पर या मुसलमान प्रचारकों पर कोई अत्याचार किया जाय। इस प्रसंग में महाराज उदयपुर को लिखा गया पत्र उद्धृत करना अनुचित न होगा। वह इस प्रकार है :-

"अपने या पराये राज्य में जहां तक हो किसी मतवाले की बहकावट से विद्यायुक्ति-विरुद्ध मत में किसी को न फंसने दें। यदि कोई समझाने पर भी न माने और जो कूप में गिरना चाहे तो इसका अभाग्य समझना चाहिए। बुरे बुराई न छोड़ें तो भले भलाई को क्यों छोड़ें।"

(२) देशी राज्यों के सम्बन्ध में ऋषि का दूसरा सिद्धान्त यह था कि रियासतों के राज्य की सीमाओं को ब्रिटिश सरकार बदल न सके। इसके लिए एक तो उनका यह आग्रह था कि पोलिटिकल एजेन्ट के पास जो राज्य का प्रतिनिधि रहे वह पक्का राज्यभक्त हो।

महर्षि महाराज उदयपुर को एक पत्र में लिखते हैं :-

"सरदार या पं. ब्रजनाथ वा अन्य कोई योग्य पुरूषों को सीमा प्रबन्ध करना चाहिये। जितनी पृथ्वी स्वराज्य की दूसरे राज्य में दबी है उसके लिए अपील शीघ्र अवश्य होनी चाहिए।" पाठकों को उपर्युक्त वृत्तान्त पढ़कर क्या एक बार महाराजा दशरथ और महर्षि वशिष्ठ के चरित्रों का स्मरण हुये बिना रह सकता है ? महर्षि दयानन्द सचमुच रियासतों के राजाओं को प्राचीन वशिष्ठ ऋषि की भांति ही उपदेश दिया करते थे।

(३) रियासतों के संगठन के विषय में महर्षि का तीसरा सिद्धान्त यह था कि राजाओं के व्यक्तिगत आचार-व्यवहार अच्छे होने चाहियें।

जोधपुर नरेश को एक पत्र में लिखते हैं। "जैसे हड़के कुत्तों के दांत लगने से उसका दोष छूटना अति कठिन है। वैसे वैश्या और खुशामदी लोगों का संघ (संग), मद्यपान, चौपड़ और कन आदि में व्यर्थ काल खोना राजाओं के लिये महाविघ्नकारक है। मुझे बड़ा आश्चर्य है कि आप बड़े बुद्धिमान् और शौर्य और गुणयुक्त होकर इनसे पृथक क्यों नहीं होते ?"

आर्यकुल-दिवाकर महाराजा उदयपुर को एक पत्र में लिखते हैं। "कवि साहित्य की जो नायिका आदि भ्रष्ट रीति है उसका स्मरण, श्रवण और वैसे मनुष्यों का संघ (संग) कभी मत कीजियेगा। और न मद्यपान, वेश्या का दर्शन, नृत्यगान आदि प्रसंग करना। जैसी दिनचर्या मैं लिख आया हूं इससे विपरीत आचरण कभी न करना, किन्तु प्रातः चार बजे उठना और दिन को १०-३० व ११ बजे भोजन करना और दिन में निद्रा न लेना और रात्रि में १० बजे तक शयन सदा कीजिएगा। सदा ६ घंटे की रीति से ध्यान करना और नाम लेना आदि पुरोहित के अधीन कीजियेगा जिससे ध्यान करने और राज्य-पालन में समय यथोचित श्रीमानों को मिले और बुद्धि बल, पराक्रम, आयु और प्रताप बढ़ता रहे।' महर्षि ने क्या मजेदार चुटकी ली है। केवल नामोच्चारण और वृथा जप के बारे में उनकी धारणा क्या थी वह इस उपदेश से स्पष्ट है।

(४) ऋषि का रियासतों के संघटन के विषय में चौथा सिद्धान्त यह था कि कुरीतियों को शक्ति से हटाकर उनके स्थान में अच्छी प्रथायें चलानी चाहिएं, महर्षि मं. सज्जनसिंह जी को लिखते हैं कि "जब दशहरा निकट आए उसमें अनपराधी भैंसे बकरे न कटें। उनके स्थान में शीरीनी, मिठाई, मोहनभोग लापसी और मिठायी प्रदान कीजिये और क्षत्रियों को कि जो शस्त्र चलाना जानते हैं उनके उत्साह, शौर्य, धैर्य, बल और पराक्रम की परीक्षा के लिए जंगली सूअरों और सिंह को प्रथम पकड़ रखें और उस दिन मैदान में छोड़ शस्त्र-प्रहार करने की आज्ञा दीजिये इनको विदित तो होवे कि शस्त्र चलाना कैसा होता है ? आरोग्य और अधिक वर्षा होने के लिए वर्ष में १० हजार रूपयों से घृत आदि जिस रीति से होम हुआ था उसी रीति से प्रतिवर्ष होम करिये।"

(५) महर्षि का पांचवां मुख्य सिद्धान्त यह था कि राजा दीनों की रक्षा करे महर्षि का दिल भी अन्य परिव्राजक और महात्माओं के समान गरीबों के साथ था। महाराणा उदयपुर को एक पत्र में लिखते हैं "सदा बलवान् और राजपुरूषों से सताये हुओं की पुकार यदि भोजन पर भी बैठे हों तो भोजन को भी छोड़ कर उन की बात सुनना और यथोचित उनका न्याय करना। ऐसा न हो कि निर्बल अनाथ लोग बलवान् और राजपुरूषों से पीड़ित होकर रूदन करें और उनका अश्रुपात भूमि पर गिरे कि जिससे सर्वनाश हो जावे। और उनकी रक्षा से सब प्रकार की उन्नति अर्थात् शरीरारोग्य, आयुवृद्धि धनवृद्धि राजवृद्धि और प्रतापवृद्धि करते रहिए।"

(६) ऋषि का छठा सिद्धान्त था कि राजपूतों में वीरता की प्रथा मिटनी न चाहिए उदयपुर के महाराणा के सम्मुख महर्षि ने निम्न स्कीम रक्खी थी।

"निरामयी महोत्सव में निम्नलिखित कार्य अवश्य कीजियेगा। (१) वेदमन्त्रों से होम। (२) सवा लाख रूपये से क्षात्रशाला (३) २५ हजार रूपये स्वराज्य में अनाथ, वृद्ध विधवा और रोगियों के पालन के लिए १० हजार रूपये मेवाड़ में वैदिक धर्म-प्रचार और प्राचीन आर्ष-ग्रन्थों के छपवाने, प्रदान करने के लिये और २ लाख रूपये वहां के सरदारों से लेकर क्षत्रशाला स्थापन शीघ्र कीजिएगा। इसमें ऐसा समझिये कि जो एक वार (Governor general) साहब आ गये थे।" विज्ञ पाठक इस उद्धरण में (1) Old age pensions (2) Employment Insurance, (3) Widow's home (4) Home for the sick. के सिद्धान्तों की झलक देख सकते हैं।

(७) महर्षि का सातवां सिद्धान्त यह था कि भारतीय स्वराज्य को स्थिर रखने और उसके क्षेत्र को बढ़ाने का उपाय। एक और यह भी है कि भारतीय भारत की प्रजा में जो सामाजिक कुरीतियां हैं वे राजशक्ति से हटा दी जावें। जहां ब्रिटिश भारत में शारदा ऐक्ट पास होता है। वहां महर्षि अपने शिष्य महाराज को निम्नलिखित आदेश देते हैं :- (जब कि अभी तक न कांग्रेस का नाम था और न सोशल कान्फ्रेंस का) "अपने राज्य में २५ वर्ष का पुरूष और १६ वर्ष की कन्या का विवाह करने के लिए दृढ़ता पूर्वक आज्ञा दीजिये। कुमार और कुमारियों का यह समय सनातन आर्ष ग्रन्थस्थ

विद्याओं के ग्रहण करने में व्यतीत होवे। जिससे सब मनुष्य जाति की सत्य उन्नति होवे।"

(२) एक विवाह से अधिक दूसरा विवाह कोई न करने पावे, यह विवाह भी दोनों की प्रसन्नतापूर्वक होवे जिससे अत्युत्तम सन्तान उत्पन्न होवें।" साथ ही साथ ऋषि यह भी समझते थे कि राज्य की आय का बहुत सा भाग कृषकों से मिलता है। अतः कृषकों की रक्षा करना राजा का विशेष कर्त्तव्य है। महाराज को एक पत्र में लिखते हैं - "जैसे राजा और कृषिबल आदि प्रजा सुखी रहे वैसा कर प्रबन्ध प्रजा में करे और उन्हीं कृषिबल आदि को सब सुख का मूल कारण समझ उनसे पितावत् वर्ते।"

(८) ऋषि का आंठवां सिद्धान्त यह है कि राजा प्रजा का वेतन-भोगी सेवक है। अतः उसका राजकीय सारी आय पर हक नहीं है। । इस विषय में महाराज को निम्न आदेश किया था "सब राजकीय आय में से १/१० धर्म की आय के लिए नियम रक्खें, जिससे विद्या, धर्म सुशिक्षा की वृद्धि के लिए अध्यापक और उपदेशक प्रचलित कर आपत्काल में अनाथों की रक्षा भी उसी धन से करें और राज्य के आय के ८ अंशों में से २ भाग स्थिर कोष, दो अंश राजकुल, तीन अंश शिल्प-विद्या की उन्नति में लगावें। अपना व अपने कुटुम्बियों का नित्य नैमित्तक व्यय नियम पूर्वक करें, अधिक नहीं।"

आज जो राजा लोग आधे से ज्यादा आमदनी आप हड़प जाते हैं और जो हमारी सरकार आधे से लगभग से ऊपर खर्च करती है वे ऋषि के इन वाक्यों की ओर ध्यान दें।

(९) स्वामी जी महाराज का नवम सिद्धान्त यह था कि स्वराज्य वृद्धि की ओर कदम उठाने से पूर्व देशी राजाओं को राज्यों में स्वराज्य की स्थापना करनी चाहिये। अर्थात् सच्चा स्वराज्य वह होता है जिसमें राजा की एक सत्ता न हो लेकिन प्रजा के परामर्श से ही सब कार्य-व्यवहार चलता हो इस सम्बन्ध में महर्षि ने महाराजा को निम्न आदेश दिया था।

" सब काम धार्मिक सभ्यों के बहुमतानुसार नियत करें और वह आज्ञा जो कि प्रजा के साथ सम्बन्ध रखती हो सब में प्रजा की सम्मति से सिद्ध करके गुण-दोष समझें पश्चात् गुणाढ्य नियमों को नियत और दोष युक्तों का त्याग करें।

राजकार्य एक पर निर्भर न रक्खें किन्तु राजपुरूष की अनुमति के अनुकुल प्रचलित करें। अपने आत्मा व शरीर को राजा व अधिकारी न समझें किन्तु राजनीति को ही राजा और राज्याधिकारिणी माने। इसे निर्दोष चलाने के लिए एक राजसभा और दूसरी विद्यासभा और तीसरी धर्मसभा नियत करें, इन समाजों में राजपुरूष और प्रजापुरूष नियत रहें। राजपुरूष राजोन्नति और प्रजापुरूष की वृद्धि में प्रयत्न किया करें। और तीनों समाजों के विचारानुकूल नये नियम प्रचलित किये जायें।

जो-जो आज्ञा इन सभाओं में निश्चित होकर प्रचलित की जावें उनका उल्लंघन कोई भी न करे। यदि करे तो वह सबका अमानतीय और दण्डनीय हो।"

इस प्रकार कई बातें तो ऋषि ने ऐसी क्रान्तिकारी लिखी हैं जिन्हें पढ़कर लैनिन भी एक बार हिल जाता। सब लोग यह चीख-पुकार कर रहे हैं कि यदि किसी धर्म-संस्था को कोई जागीर मिली हुई हो उसे खोंस लेना धर्म में हस्ताक्षेप है और पैतृक सम्पत्ति पर सब सन्तानों को अधिकार है इस पर ऋषि लिखते हैं। परन्तु धमार्थ आदि के लिए जो दिया हो उसके भोक्ता अन्याय से वर्त्तते हों तो भी उस अंश को राजअंश में न मिलावे, किन्तु कुकर्मी से छुड़ा योग्य धर्मात्मा को इसका अधिकारी करे। यदि उनके सन्तान पितरों से अधिक योग्य हों तो उनको अयोग्य के अंश में से अधिक अंश देवें। और अधिक प्रतिष्ठा देवें।"

इस प्रकार अन्य अनेक क्रान्तिकारी विचार महर्षि के पत्रों में बिखरे पड़े हैं। पाठक उपर्युक्त विचारों को पढ़कर उनको क्रिया में लाने का प्रयत्न करें। ❑❑

दीप कुछ ऐसा जलाएं....

उगते ही अस्त
न हो आदमी
स्वार्थ में ही
व्यस्तन हो आदमी
दीप कुछ ऐसे
जलाएं साथियों!
तिमिर का अभ्यस्त
न हो आदमी.....।

— गिरि मोहन गुरु

स्वामी दयानन्द और उनका राष्ट्रवाद

—देवेन्द्र कुमार "विद्याविशारद"

मॉडर्न रिव्यू के यशस्वी सम्पादक श्री रामानन्द चटर्जी ने लिखा है- स्वामी दयानन्द भारत को राजनैतिक, सामाजिक और धार्मिक रूप से एक सूत्र में बांधना चाहते थे। भारत को एक राष्ट्र का रूप देने के लिए उन्होंने भारत को विदेशी शासन से मुक्त कराना चाहा। सामाजिक दृष्टि से राष्ट्र से राष्ट्रवासियों की एकता के लिए उन्होंने जॉत-पांत को मिटाना चाहा और धार्मिक दृष्टि से एकता के विचार से उन्होंने समालोचना का दिव्यास्त्र अपनाया।

यों तो हमारे देश में अनेक साधु सन्त, योगी दार्शनिक, आचार्य, धर्म प्रचारक एवं विचारक हुए हैं परन्तु राष्ट्र के प्रति अनन्य निष्ठा व्यक्त कर अपने अनुयायियों को स्वराज्य प्राप्ति की प्रेरणा देने वाला अप्रतिम व्यक्ति दयानन्द ही था। इस महापुरूष ने सर्वप्रथम स्वराज्य की भावना के मूल का दर्शन भारतवर्ष के पवित्र साहित्य वेद में किया। अथर्ववेद के पृथवी सूक्त में भूमि को माता तथा उस पर निवास करने वाले मनुष्य को इसका पुत्र कहा है (माता भूमिऋम पृथिव्या) वेद की इन्हीं शिक्षाओं से प्रभावित होकर ऋषिदयानन्द ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में स्वराज्य की महिमा का वर्णन करते हुए कहा था "कोई कितना ही करे, परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है मतमतान्तर से आग्रह रहित, प्रजा पर माता पिता के सदृश कृपा न्याय एवं दया से पूर्ण भी विदेशी राज्य पूर्ण सुखदायी नहीं होता। "यह बात ऋषि दयानन्द ने हेनरी केम्बेल बेनर मेन के कथन "सुशासन स्वशासन का विकल्प नहीं हो सकता" से वर्षों पूर्व कही थी।

स्वदेश भक्ति की भावना का उदबोधन करते हुए उन्होंने एक स्थल पर लिखा- "जिस देश के पदार्थों से अपना शरीर बना, अब भी पालन होता है और आगे होगा; उसकी उन्नति तन, मन, धन से सब जने मिलकर प्रीति से करें।" "स्वदेश के अतीत का गौरव गान करते हुए उन्होंने कहा" "सृष्टि से लेकर पांच सहस्त्र वर्षों के पूर्व समय पर्यन्त आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती अर्थात् भूगोल में सर्वोपरि एक मात्र राज्य था।"उनके प्रार्थना परक ग्रन्थ आर्याभिविनय का एक स्थल भारत छोड़ो आन्दोलन की मानो पूर्व ध्वनि है जहां वे परमात्मा को राजाधिराज कहकर सम्बोधित करते तथा उनसे प्रार्थना करते हुए आर्यों के अखण्ड चक्रवर्ती सार्वभौम राज्य की कामना करते हैं। आगे ऋषिवर कहते हैं "अन्य देशवासी राजा हमारे देश में कभी न हों हम कभी भी पराधीन न हों।" आर्याभिविनय की इन पंक्तियों को पटियाला षडयन्त्र अभियोग में प्रस्तुत करते हुए रियासत के अंग्रेज वकील एडवर्ड ग्रे ने विशेष ट्रिब्यूनल के समक्ष स्वामी दयानन्द के ग्रन्थों को अंग्रेज सरकार के विरूद्ध विद्रोह भावना उत्पन्न करने के लिए उत्तरदायी ठहराया था। सर वेलेन्टाइन विरोल जैसे साम्राज्यवादी पत्रकार को दयानन्द एवं आर्य समाज के धर्म संशोधन के कार्यक्रम में कुछ दुरभिसन्धि नजर आती है। वह लिखता है कि आर्य समाज प्रत्यक्षतया हिन्दू कट्टरता के विरूद्ध एक विद्रोह प्रतीत होता है परन्तु अंततः पश्चिमी आदर्शों के विरूद्ध विद्रोह की शिक्षा देकर आर्य समाज ने परकीय शासन को समाप्त करने के ही स्वप्न संजोये थे।

दयानन्द मूलतः राष्ट्रवादी थे। योगी अरविन्द का कथन है- उनमें राष्ट्रीय भावना सहज वृत्ति के रूप में विद्यमान थी और वे उसे प्रदीप्त कर सके। दयानन्द ने १८ वीं शताब्दी में स्वराज्य का शंखनाद उस समय किया जब इंडियन नेशनल कांग्रेस का जन्म भी नहीं हुआ था। १९०६ में सर्वप्रथम दादाभाई नौरोजी ने 'स्वराज्य' शब्द का उच्चारण कांग्रेस के मंच से किया था। १९१६ में लखनऊ कांग्रेस में लोकमान्य तिलक ने 'स्वराज्य' को प्रत्येक भारतीय का जन्माधिकार घोषित किया था। १९२९ में लाहौर अधिवेशन के अवसर पर कांग्रेस ने पूर्ण स्वराज्य को अपना ध्येय घोषित किया था। परन्तु स्वामी दयानन्द तो इससे लगभग आधी शताब्दी पूर्व प्रकाशित स्वग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में स्वराज्य एवं स्वाधीनता का महत्व प्रतिपादित कर चुके थे।

भारत को आत्म विस्मृति के गर्त से निकालना स्वामी दयानन्द का ही कार्य था। आत्मबोध विकास का पहला सोपान है और इस बोध के जगाने में दयानन्द का स्थान सर्वोपरि है। रामधारी सिंह दिनकर ने कहा है- सांस्कृतिक क्षेत्र में भारत का आत्माभिमान दयानन्द में निखरा।

दयानन्द अकेले राष्ट्रीय स्वाभिमान के ज्योतिर्धर पुरूष थे। जो समस्त विदेशी प्रभाव से मुक्त होकर उसके

विरूद्ध खम ठोक कर खड़े होने वाले जनता के प्रतिनिधि नेता थे। बंगभंग कालीन राष्ट्रीयता के तेजोपुंज अरविन्द घोष के शब्द हैं- मनुष्यों तथा संस्थाओं के शिल्पी दयानन्द को ज्ञात था कि उसकी उपादान सामग्री तथा साधना संभार क्या हैं तथा उनसे उसे क्या काम लेना है? भारत की महिमा का वर्णन करते हुए ऋषि ने लिखा-यह आर्यावर्त देश ऐसा है ज़िसके सदृश भूगोल में दूसरा देश नहीं है। आर्यावर्त देश ही सच्चा पारसमणि है जिसको लौह रूपी विदेशी छूते ही सुवर्ण अर्थात धनाढ्य हो जाते हैं। वस्तुतः ऋषि ने अपनी नवनवोन्मेषशालिनी प्रज्ञा से भारतीय इतिहास के उन तथ्यों को उद्घोषित किया जो हमारे रक्त में आज भी उष्मा प्रदान करते हैं। वेदों को गडरियों के गीत बताने वाले विदेशियों को करारा उत्तर देकर ऋषि ने वेदों को ज्ञान का अनुपम भण्डार बताया। भारतीयों को समस्त विद्याओं के आविष्कर्त्ता होने के गौरव की अनुभूति कराई तथा बताया कि हम ऋषियों की सन्तान हैं हमारा देश अतीत में संसार का आचार्य रहा है। ऋषि ने भारतीयों को स्वदेश, स्वसंस्कृति, स्वभाषा एवं स्वधर्म अपनाने का आग्रह किया। हिन्दी प्रचार, गोरक्षा, स्टाम्प डयूटी, नमक कर विरोधी, जंगल कानून का विरोध, शुद्धि, अछूतोद्धार, स्त्री शिक्षा एवं गुरूकुल पद्धति जैसे मूलभूत कार्यक्रमों का उद्घोष कर गांधी जी के पूर्व ही भारतीय जन जीवन को झकझोर डाला था।

ऋषि के राष्ट्रीय जागरण के कार्यक्रम पर टिप्पणी करते हुए लुइस एन फ्रांस ने लिखा था- दयानन्द अपने धार्मिक सुधारों के साथ ही हिन्दुत्व को इस बात की प्रेरणा देता था कि वह अपने भीतर एक धार्मिक सैनिक संगठन बनाए। केम्ब्रिज विश्व विद्यालय के प्रो. टामस ने हिन्द मैनर्स एण्ट कस्टम में लिखा -यदि दयानन्द को अधिक दिनों तक जीने का अवसर मिलता तो वह अपने अनुयायियों के लिए एक शक्तिशाली साम्राज्य की स्थापना कर जाता। महर्षि दयानन्द ने भारतीय राष्ट्रवाद को अत्यधिक सुदृढ़ वैचारिक धरातल प्रदान करके एक प्रकार से भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन की नींव डाली थी। भारत के लौह पुरूष सरदार पटेल ने कहा था — वस्तुतः उन्होंने भारतीय स्वतन्त्रता की नींव रखी थी। श्रीमती एनी वेसेन्ट ने कहा था जब भारतमाता की स्वतन्त्रता का मन्दिर बनाया जायगा तो उसमें सर्वोच्च स्थान नंगे साधु महर्षि दयानन्द को दिया जायेगा।

यह सर्व विदित है कि स्वामी दयानन्द अपने जीवन के अन्तिम काल में राजस्थान और उदयपुर, शाहपुर, जयपुर और जोधपुर आदि रियासतों में भ्रमण करते हुए जन जागरण का शंखनाद कर रहे थे। इस भ्रमण के पीछे उनका उद्देश्य शासक गणों को देश जाति के प्रति कर्त्तव्यों का बोध कराना था। स्वामी दयानन्द की प्रेरणा से उदयपुर के महाराणा सज्जन सिंह शाहपुराधीश नाहर सिंह तथा जोधपुर के शासककर्नल राजा प्रताप सिंह ने अपने राज्यों में जनहित के अनेक कार्य किये जिनसे जन जागरण को उचित दिशा मिली। दयानन्द के जिन अनुयायियों ने राजस्थान की रियासतों को राजनैतिक चेतना तथा प्रबुद्धता चेतना प्रदान की उनमें अजमेर के चांदकरण शारदा, रामनरायण चौधरी, बीकानेर केहरिशचन्द्र नेण, भरतपुर के युगल किशोर चतुर्वेदी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। राजस्थान के लोकनायक स्वर्गीय जयनारायण व्यास ने यह स्वीकार किया है कि जब उन्होंने दिल्ली के चांदनी चौक में स्वामी श्रद्धानन्द को अंग्रेजों के समक्ष, सीना उघाड़कर साम्राज्यवादियों की बर्बरता का मुकाबला करते देखा तो उनमें अनायास ही स्वयं को देश हित में अर्पित करने की इच्छा बलवती हो गई। तभी से वे आज़ादी की लड़ाई में तत्परता से कूद पड़े। राजस्थान के हृदय देश अजमेर में चांदकरण शारदा ने 'राजपूताना मध्य भारत' सभा की स्थापना की तथा स्वर्गीय जमनालाल बजाज एवं गणेश शंकर विद्यार्थी के सहयोग से राजस्थान में स्वतन्त्रता की मशाल प्रज्वलित की।

गांधी जी के आगमन के पूर्व ही दयानन्द एवं आर्यसमाज ने स्वाधीनता की जमीन तैयार कर दी थी तथा राष्ट्रीय चेतना के बीज वपन कर दिये थे। इन बीजों से फूटे अंकुरों को गांधी जी ने खाद पानी देकर बड़ा किया। इसी परिणाम स्वरूप १५ अगस्त १९४७ को भारत स्वाधीनता के मधुर फलों को प्राप्त कर सका।

स्वाधीनता आन्दोलन एवं राष्ट्रीय चेतना में दयानन्द के योगदान को विभिन्न विचारकों ने अलग-अलग दृष्टिकोण से नापा है। कैलाशनाथ काटजू का कथन है-स्वामी दयानन्द ने ही सर्वप्रथम स्वतन्त्रता का बीज बोया था। एनीबेसेन्ट के अनुसार स्वामी दयानन्द पहले व्यक्ति थे जिन्होंने भारत भारतीयों का नारा लगाया था। विपिनचन्द्रपाल लिखते हैं- वह दयानन्द ही था जिसने उस आन्दोलन की आधार शिला रखी जो बाद में धार्मिक राष्ट्रीयता केनाम से जाना गया। अवन्तशयनम आयंगर ने स्वामी जी को राष्ट्र पितामह कहकर उनके महत्व का मूल्यांकन किया है। ❑❑

नारी उद्धारक देव दयानन्द – (१)

— डा. वसुन्धरा रिहानी

युग प्रवर्त्तक देव दयानन्द ने जब समाज सुधार के क्षेत्र में पदार्पण किया तो उन्होंने तत्कालीन भारतीय समाज में प्रचलित विविध कुरीतियों, अन्ध विश्वासों एवम् मिथ्या धारणाओं के उन्मूलन के साथ साथ नारी उत्थान व उद्धार की दिशा में भी अभूतपूर्व कार्य किया। उस समय समाज में नारी की स्थिति अत्यन्त दयनीय व दुखद थी। " स्त्री शूद्रौ नाधीयाताम्" प्रभृति वचन कह कर नारी को शिक्षा व वेदाध्ययन के अधिकार से वञ्चित रखा जाता था। इतना ही नहीं पुराण-पण्डित तो यहां तक भी कहते थे कि "स्त्री और शूद्र यदि वेद का शब्द भी सुन लें तो उनके कान सीसे और लाख से भर देने चाहिएं।" उस समय नारी के कर्तव्य चूल्हे-चौके और परिवार बनाने और उनके पोषण करने तक ही सीमित थे। पुरूष वर्ग नारी को या तो "ताड़न की अधिकारिणी" समझता था या फिर अपनी आवश्यकतानुसार "कामिनिकाञ्चन तथा भोग-विलास की मूर्ति " के रूप में देखता था। समाज में बाल-विवाह प्रथा एवम् बहुपत्नी प्रथा जैसी कुप्रथाएं प्रचलित थीं। बाल-विवाहों में गुण कर्म- स्वभाव व आयु के विपरीत बे मेल शादियां सम्पन्न होती थीं; परिणाम स्वरूप सैंकड़ों हज़ारों ललनाएं विधवा हो जाती थीं। विधवा स्त्री को बहुत ही गर्हित दृष्टि से देखा जाता था। मांगलिक उत्सवों में विधवाओं का भाग लेना अशुभ माना जाता था। विधवाओं के तथाकथित अकल्याणकारी प्रभाव से बचने के लिए उन्हें या तो देवदासी प्रथा के रूप में जघन्य वृत्ति वाले पण्डों की भेंट चढ़ा दिया जाता था या फिर सती प्रथा के रूप में पति की चिता पर जीवित जलने को बाध्य किया जाता था। नारी पर छल, प्रपंच, कुटिलता, क्रूरता, कामुकता, मूर्खता, पर वंचकता जैसे दोषों का अरोपण किया जाता था। इन परिस्थितियों में जब नारी "असूर्यम्पश्या" बन कर घर की चार दीवारी में ही जीवन व्यतीत करती थी तो नारी के विदुषी और अध्यापिका आदि बनने, आत्मोन्नति के लिए राजनीतिक, सामाजिक अथवा धार्मिक अनुष्ठानों में भाग लेने की बात कोई स्वप्न में भी नहीं सोच सकता था।

सदियों से क्रन्दन करती नारी की जिस चीत्कार को समाज के बहरे श्रवणरन्ध्र आज तक न सुन सके महर्षि दयानन्द सरस्वती ने उस अन्तर्नाद को केवल सुना ही नहीं अपितु खूब ग़हराई से अनुभव भी किया।

उन्होंने देखा कि वेद की "अदितिः" (असीम क्षमता वाली) "अरूधारा" (ज्ञान एवं सुशिक्षा को धारण करने वाली) "पुरन्धिः (घर या समाज की नेतृ) "सहीयसी" (अत्यन्त बल वाली) "मही" (अतिपूजनीया) (सन्दर्भ हेतु द्रष्टक : - यजु. ८.४३, वही ८.४२; वही १४.२; साम. पूर्व. १७४१; यजु. ८.४३;) कहलाई जाने वाली नारी की वर्तमान दुर्गति के मूल कारण समाज में प्रचलित स्त्री-शिक्षा का अभाव, बाल-विवाह, बहुपत्नी प्रथा, विधवा विवाह का निषेध पर्दा और दहेज प्रथा जैसे असामाजिक दुराग्रह ही हैं। स्वामी जी ने इन्हीं दुराग्रहों पर कुठाराघात कर नारी उद्धार का सकंल्प किया। एक नग्न अवोध बालिका में भी मातृशक्ति का दर्शन कर उसे नमस्कार करने वाले महर्षि ने नारी शक्ति के प्रति तत्कालीन समाज में प्रचलित हीन विचारों को परिवर्तित करने के लिए और समाज में नारियों को उनका वाञ्छित स्थान दिलाने के लिए वेदों को आधार बना कर अपनी लेखनी और वाणी को प्रवृत्त किया।

स्त्री शिक्षा :- महर्षि दयानन्द सरस्वती अपनी दिव्य दृष्टि से यह जान चुके थे कि विभिन्न कुण्ठाओं, अन्ध विश्वासों एवं आत्म तेज से हीन किसी राष्ट्र को सशक्त एवं आत्म निर्भर बनाने का सर्वोत्म उपाय स्त्री शिक्षा ही है। देव दयानन्द की यह दृढ़ मान्यता थी कि उस परमपिता परमेष्ठी ने सृष्टि रचना कर प्रजा पालन का भार जिसको सर्वप्रथम सौंपा वह दिव्य शक्ति सम्पन्न नारी ही है। वह नारी ही मां के रूप में सन्तान को आत्मनिष्ठ एवं सुसंस्कारित बना सकती है। परमात्मा ने सब को उसकी क्षमतानुसार ही कार्य सौंपे हैं। अतः जिस नारी जाति के कन्धों पर प्रजापालन रूपी राष्ट्रीय गुरूतर भार हो उसे सुशिक्षित होने की आवश्यकता नहीं — यह असम्भव है। अतः राष्ट्र में पूर्ण साहस ओज एवं तेज तभी फूंका जा सकता है। जब नारी को विद्यागुण-विभूषिता और शक्ति सम्पन्ना बनाया जाए। इस विषय में इतिहास के सबल प्रमाणों को प्रस्तुत करते हुए दयानन्द ने यह बताया कि - "पुराकाल में स्त्रियां कैसी पण्डित एवं विदुषी होती थीं।" उपदेश मञ्जरी (पूना प्रवचन) के तृतीय प्रवचन में वे कहते हैं— "गार्गी, सुलभा, मैत्रयी, कात्यायनी आदि बड़ी बड़ी सुशिक्षित स्त्रियां होकर बड़े

-२ ऋषि मुनियों की शंका का समाधान करती थीं।" इसी प्रकार अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ- प्रकाश में वे लिखते हैं "देखो! आर्यावर्त्त के राजपुरुषों की स्त्रियां धनुर्वेद अर्थात् युद्ध विद्या भी अच्छे प्रकार जानती थीं क्योंकि जो न जानती होतीं तो कैकयी आदि दशरथ आदि के साथ युद्ध में क्यों कर जा सकतीं?" (तृतीय समुल्लास) वेदोद्धारक महर्षि दयानन्द ने ऐसे समय में वेद के सामाजिक शिक्षा परक अर्थ रखे और उससे नारी शिक्षा के स्रोत को जन-जन के हृदयों में प्रवाहित कर दिया। उदाहराणार्थ :- ऋग्वेद १.१५२.६ मन्त्र के भाष्य में वे लिखते हैं "जैसे माताएं सन्तानों को दूध आदि दे कर बढ़ाती हैं वैसे विदुषी स्त्रियां कुमारियों को अच्छी शिक्षा से बढ़ावें। "इसी भांति यजुर्वेद १०.७ मन्त्र के भाष्य में वे लिखते हैं - "राजा को प्रयत्नपूर्वक अपने राज्य में सब स्त्रियों को विदुषी बनाना चाहिए। "स्वामी जी का यह भी विचार था कि नारियों को विदुषी बनकर कन्या गुरूकुलों और कन्या पाठशालाओं में कन्याओं को शिक्षित करना चाहिए। यजुर्वेद २०.८५ मन्त्र के भाष्य में वे लिखते हैं "जो स्त्रियों के बीच में विदूषी स्त्री हो वह सब स्त्रियों को सदा सुशिक्षा करे, जिससे स्त्रियों में विद्या की वृद्धि हो। स्त्रियों के वेदाध्ययन के अधिकार में भी स्वामी जी की मान्यता है कि परमेश्वर ने स्त्री, पुरूष, आबाल, वृद्ध सब को वेद पढ़ने का अधिकार दिया है। सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास में वे यजुर्वेद के २६.२ मन्त्र "यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः" का उद्धरण देकर अपने उक्त मत की पुष्टि करते हैं। इसी स्थल पर वे श्रौतसूत्रादि के "इमं मन्त्रं पत्नी पठेत्" (अर्थात् यह मन्त्र पत्नी पढ़े) वाक्यांश को उद्धत करके कहते हैं यदि " पत्नी वेदादि शास्त्रों को न पढ़ी हो तो यज्ञ में सस्वर मन्त्रों का उच्चारण कैसे कर सकेगी। अतः स्पष्ट है कि स्त्रियों के लिए वेदाध्ययन का अधिकार शास्त्रसम्मत है। स्त्री शिक्षा के सन्दर्भ में आदर्श पत्नी और कर्त्तव्य निष्ठ मां के स्वरूप पर भी स्वामी जी ने स्वकीय ग्रन्थों में पर्याप्त प्रकाश डाला है।

(शेष अगले अंक में)

महर्षि दयानंद वैदिक शोध पीठ,
(पंजाब विश्वविद्यालय) चंडीगढ़

दयानंद संस्थान के तत्वावधान में

आध्यात्मिक योगसाधना शिविर

दयानंद संस्थान के अन्तर्गत **वेद-मन्दिर, महात्मा वेदभिक्षुः सेवाश्रम, इब्राहीमपुर, दिल्ली-३६** में **२७ दिसम्बर १९९९ से २ जनवरी २००० तक** एक साधना शिविर का आयोजन किया जा रहा है। यह शिविर संस्थान के **आचार्य स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती की अध्यक्षता** में लगेगा। शिविर में प्रतिदिन प्रातः सायं दोनों समय ध्यान, प्रातःकाल यज्ञ, वेद-मन्त्रों का शुद्ध उच्चारण, शङ्का समाधान और रात्रि में विशेष व्याख्यानों का आयोजन रहेगा।

इच्छुक व्यक्ति शीघ्र अपने नाम भेजकर अपना स्थान सुरक्षित करा लें।

हम बीस व्यक्ति से अधिक शिविर में नहीं रख सकेंगे, क्योंकि स्थान सीमित है।

एक सप्ताह का भोजन व्यय ३००/- रु० (तीन सौ रुपये) होगा।

सत्यार्थ प्रकाश, संस्कार विधि, टार्च, थाली, गिलास, कटोरी, चम्मच और बिस्तर साथ लाएँ।

डा० धर्मवीर
मंत्री

कार्यालय : दयानंद संस्थान, २२८६, आर्य समाज मार्ग, नई दिल्ली—५

महर्षि दयानंद की जीवन यात्रा का अंतिम चरण

—दिव्या आर्य

देव दयानंद उन महापुरूषों की श्रृंखला की अनन्य कड़ी थे जा संत्रस्त मानवता का पुनः उद्धार करने और उसके समक्ष सत्यपथ प्रदर्शित कराने के लिए कर्मक्षेत्र में उतरे थे। उन्होंने 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' के उद्घोष को हृदयंगम कर, वर्षों तक कठिन साधना कर विश्व की विभ्रान्त मानवता को यह संदेश दिया था कि ऐ संसार के पथ-भ्रष्ट लोगों! तुम्हारी समस्याओं का निदान तुम्हारे कल्याण का मार्ग, कोरे भौतिकवाद से न होकर संर्वागीण विकास कराने में समर्थ उदात्त वैदिक दर्शन द्वारा ही संभव है। यहां प्रस्तुत है उस युग पुरूष की जीवन यात्रा के अंतिम चरण का संक्षिप्त विवरण —संपादक

जोधपुर की सत्ता महाराजा जसवन्तसिंह के हाथों में थी और उनके राज्य में सभी मतों का अवलम्बन करने वालों को पूर्ण धार्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त थी। राज्य के उच्च पदों पर नियुक्तियों में कोई भेदभाव नहीं बरता जाता था। उन दिनों फ़ैजुल्लाखां राज्य के दीवान थे। महाराजा जसवन्त सिंह दानशील और अतिथिपरायण थे, लेकिन नन्हीं जान भगतिन नाम की एक वेश्या उनके मन-मस्तिष्क पर अधिकार किए बैठी थी। नन्हीं के राजमहल में आने और लौटने पर महाराजा प्रायः स्वयं ही उसकी अगवानी करते और उसे विदाई देते थे। इतना ही नहीं, रूप और लावण्य की इस जीवित जागृत प्रतिमा को महाराज 'नन्हीं जी' कहकर सम्बोधित किया करते थे।

महाराजा जसवन्तसिंह के दीवान फ़ैजुल्लाखां स्वामीजी से चिढ़ गए, क्योंकि स्वामी जी अन्य मतों के साथ इस्लाम की भी आलोचना किया करते थे। एक दिन फ़ैजुल्लाखां ने चिढ़कर यहां तक कह दिया, "स्वामी जी, यदि मुसलमानों का राज्य होता तो लोग आप को जीवित न छोड़ते।" निर्भीक दयानन्द ने करारा उत्तर दिया, "यदि ऐसा अवसर होता तो मैं भी दो-चार वीर राजपूतों की पीठ ठोंक देता।" इसी प्रकार उनका पूर्तिपूजा-खंडन अनेक पंडे-पुजारियों को खल रहा था।

इस प्रकार की परिस्थितियों में एक दिन जब स्वामी जी महाराजा से मिलने पधारे, तो नन्ही भगतिन भी वहां उपस्थित थी। द्वारपाल स्वामीजी को भीतर आने से रोकने का साहस न संजो पाया। ज्यों ही महाराजा को स्वामीजी के आने की सूचना मिली, त्यों ही उन्होंने सेवकों को आदेश दिया कि नन्हीं भगतिन को यथाशीघ्र महल से बाहर ले जाया जाये। शीघ्रता में नन्हीं जब पालकी में बैठ रही थी, तब वह कुछ डगमगा गई। जोधपुर नरेश ने सहारा देकर उसे संभालने का प्रयत्न किया। कुछ हास-परिहास भी हुआ। स्वामीजी ने यह दृश्य देखा, तो वह वहीं जोधपुर नरेश से बोले "महाराज, वीर क्षत्रिय सिंह के तुल्य समझे जाते हैं। यत्र-तत्र भटकने वालियों के साथ उनका ऐसा सम्बन्ध अशोभनीय तो है ही, आर्य मर्यादा के भी विपरीत है।" स्वामीजी के इन वाक्यों से नन्हीं क्रोधाग्नि से जल उठी जबकि जोधपुर नरेश पानी-पानी हो गए। बाद में स्वामी जी ने उन्हें धैर्यपूर्वक समझाया, पत्र भी लिखा। इस सब का परिणाम यह हुआ कि जोधपुर नरेश के जीवन में संयम और सदाचार के विचार अंकुरित होने लगे। नन्हीं के लिए यह स्थिति असह्य थी। प्रतिशोध की आग में जलकर यह नारी विरोधियों से जा मिली।

दूध में विष

षड्यन्त्रकारियों का गुट पबल होता गया। २५ सितम्बर, १८८३ की रात को स्वामी जी के निवासस्थान से छह-सात सौ रुपए का सामान चोरी हो गया। इन षड्यन्त्रकारियों ने स्वामीजी की सेवा में रहने वाले ब्रह्मचारी रामानन्द को भी अपनी ओर फोड़ लिया था। इस घटना के चार दिन बाद अर्थात् २९ सितम्बर १८८३ को स्वामीजी को दूध में कांच पीसकर पिला दिया गया। स्वामी जी का रसोइया जगन्नाथ इस कुकृत्य का प्रमुख भागीदार था। स्वामीजी जगन्नाथ द्वारा दिया दूध पीकर सो गए। थोड़ी ही देर में उनके पेट में तेज दर्द होने लगा। वे उठे और उन्होंने तीन बार वमन किया। कुल्ले कर के स्वामी जी ने सो जाने की कोशिश की। लेकिन दर्द इतना तेज था कि उनकी आंख ने लगी। पेट दर्द कम न हुआ। दिल की घबराहट बढ़ती गई। कंठ सूखने लगा और दस्तों का भी सिलसिला प्रारम्भ हो गया। सबसे पहले डाक्टर सूर्यमल ने उन्हें दवाई दी और फिर सहायक सर्जन अली मरदान ने; किन्तु दस्तों की संख्या बढ़ती ही गई- दिल की घबराहट भी। कहा जाता है कि अली मरदान ने स्वामी जी की इच्छा के विरूद्ध उनका इलाज किया। यह भी कहा

जाता है कि डाक्टर अली मरदान नन्ही जान का दीवाना था। जब स्वामी जी रोग के कारण बहुत दुर्बल हो गए, तब उन्हें आबू पर्वत ले जाने का फैसला किया गया। २१ अक्टूबर को स्वामी जी को पालकी पर आबू पर्वत ले जाया गया। मार्ग में डाक्टर लक्ष्मणदास मिले, जो आबू पर्वत से स्थानान्तरित होकर अजमेर जा रहे थे। उन्होंने कापाय वस्त्रधारी सन्यासी को पालकी में लेटे देखा। पूछताछ करने पर जब उन्हें बताया गया कि वह सुप्रसिद्ध सन्यासी दयानन्द हैं तो आपने उनकी नाड़ी देखी और उन्हें तीन बार अमोनिया की थोड़ी-थोड़ी मात्रा दी। इस औषधि के फलस्वरूप स्वामीजी की चेतना लौटी। उन्होंने लेटे-लेटे आंखें खोलीं और कहा, "मुझे किसी ने विष दे दिया है।" डाक्टर लक्ष्मणदास ने भी निश्चय कर लिया कि चाहे नौकरी रहे या न रहे, वह स्वामी जी का इलाज करेंगे। उनके इलाज से स्वामीजी को काफी लाभ हुआ और उनका पेट दर्द शान्त हो गया। दस्त भी बन्द हो गए। २४ अक्टूबर को उन्हें नींद भी आ गई।

डाक्टर लक्ष्मण दास को अजमेर जाना था, किन्तु वह स्वामी जी की सेवा में लगे रहना चाहते थे। उन्होंने दो महीने की छुट्टी मांगी, लेकिन राजस्थान के मुख्य चिकित्सा अधिकारी कर्नल स्पैन्सर ने उनकी छुट्टी की अर्जी मंजूर न की। इस पर उन्होंने त्यागपत्र लिख दिया, किन्तु स्वामी जी ने उनका त्याग-पत्र फाड़कर उन्हें अजमेर जाने को कहा। अन्ततः डाक्टर लक्ष्मणदास ने पुनः कर्नल स्पैन्सर को त्यागपत्र भेजा, लेकिन कर्नल स्पैन्सर ने उसे भी नामंजूर कर दिया और उनसे कहा कि "तुम चिन्ता न करो, मैं स्वयं तुम्हारे गुरु (स्वामी दयानन्द) का इलाज करूंगा।"

कर्नल स्पैन्सर का इलाज स्वामी जी को अनुकूल न पड़ा और रोग पुनः उग्र हो गया, यद्यपि स्वामी जी शरीर की इस विषम स्थिति में भी अपने भक्तों को कष्ट न देना चाहते थे, लेकिन भूपाल सिंह और बम्बई के सेवकराम कर्पनदास आदि के अनुरोध पर स्वामी जी ने आबू पर्वत से अजमेर जाना मान लिया। २७ अक्टूबर को ब्राह्म मुहूर्त में चार बजे वे अजमेर पहुंचे। वहां आगरा के दरवाजे के समीप स्थित भिनाय कोठी में उनके निवास की व्यवस्था की गई। डाक्टर लक्ष्मणदास ने फिर इलाज शुरू किया, लेकिन रोग में उतार-चढ़ाव चलता रहा- स्वामी जी पूर्णतः नीरोग न हुए। अन्ततः स्वामी जी को आभास हो गया कि अब इस देह के त्याग की घड़ी नजदीक है। सारे शरीर में विष का प्रभाव व्याप्त हो चुका था। छाले भी फैलने लगे थे। दीपावली से दो दिन पूर्व पंडित गुरुदत्त विद्यार्थी एम. ए. और लाला जीवनदास भी स्वामी जी के दर्शनार्थ लाहौर से अजमेर पहुंच गए। उदयपुर से श्री मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या भी उनका कुशलक्षेम पूछने आ गए।

कार्तिक अमावस्या (३० अक्टूबर) को डाक्टर लक्ष्मणदास ने स्वामीजी के जीवन की सब आशाएं छोड़ दीं। अजमेर के सिविल सर्जन डाक्टर न्यूमैन बुलाए गए। उन्होंने स्वामीजी की हालत देखकर कहा, "यह बड़े साहसी और सहनशील हैं। इनकी नस-नस और रोम-रोम में रोग के विषैले कीटाणु घुसकर कुलबुलाहटर कर रहे हैं। फिर भी ये प्रसन्नचित्त हैं। ऐसे रोग में भी जीवित रहना इन्हीं का काम है।" जब डाक्टर ने उन्हें बताया कि "ये महान् पुरूष स्वामी दयानन्द हैं", तब उन्हें बहुत शोक हुआ।

महाप्रयाण

यद्यपि आज के दिन दशा अधिक गम्भीर थी, किन्तु स्वामी जी स्वयं को कुछ अच्छा अनुभव कर रहे थे। ग्यारह बजे चार व्यक्तियों की सहायता से उठकर शौच से निवृत्त हुए। उस समय श्वास की गति तीव्र थी। भक्तजनों के प्रश्न करने पर आप बोले कि "एक मास के बाद दिन आराम का है। जब लाला जीवनदास ने पूछा कि "आप कहां हैं ?" तो स्वामी जी ने कहा कि "ईश्वरेच्छा में।"

दोपहर बाद स्वामी जी ने दो सौ रुपये और दो दुशाले मंगवा कर कहा कि "ये आत्मानन्द और भीमसेन को दे दो।" पांच बजे के बाद स्वामीजी ने समागत भक्तजनों को आदेश दिया कि उनके पीछे खड़े हो जायें और कहा कि सब खिड़कियां और दरवाजे खोल दो। फिर पूछा, "आज कौन-सा मास, पक्ष और दिन है?" एक भक्त ने उत्तर दिया, "महाराज, आज कार्तिक मास, अमावस्या और मंगलवार है।" यह सुनकर स्वामीजी ने ऊपर दृष्टि डाली। फिर ज्योतिपूर्ण दृष्टि से चारों ओर देखा और वेद मन्त्रों का पाठ किया। संस्कृत में ईश्वरस्तुति की, गायत्री मन्त्र का उच्चारण किया और समाधिस्थ हो गए। फिर आंखें खोलीं और ओ३म् का उच्चारण कर बोले-"हे दयामय! सर्वशक्तिमान्। अद्भुत है तेरी लीला।" इन शब्दों का उच्चारण कर स्वयं करवट ली, एक बार श्वास को रोका और फिर सदैव के लिए बाहर निकाल दिया। दीपावली का दिन था, शाम के छह बजे थे। देव दयानन्द अपनी इहलीला समाप्त कर ज्योतिर्मय की ज्योति में लीन हो गए। भक्तजन देखते रह गए। गुरुदत्त विद्यार्थी ने भी महायोग की यह लीला देखा। उनके मन का अन्धकार नष्ट हो गया। वे नास्तिक से आस्तिक बन गए। भक्तजनों की आंखें अश्रुपूर्ण थीं। अन्तिम विदाई के दृश्य से उनके

हृदयों में एक अद्भुत ज्योति का प्रवेश हो रहा था। उनके लिए यह दीपमलिका का अमिट प्रकाश था।

अगले दिन स्वामी जी के शरीर की अत्येष्टि क्रिया की तैयारियां की गई। शरीर पर चन्दन का लेप किया गया। उनकी शवयात्रा में सहस्त्रों लोग साथ थे। इनमें सभी प्रदेशों और सभी वर्गों के लोग सम्मिलित थे। अर्थी भी बहुत बड़ी थी। उनके शव को उठाने के लिए १६ व्यक्ति लग थे। श्मशान भूमि में शवदाह सम्पन्न हुआ। रामानन्द और आत्मानन्द ने यथाविधि अग्न्याधान किया। अग्नि स्पर्श होते ही घृत सिंचित चिता ज्वालमालाओं में आवृत हो गई। उस दाह-कुण्ड में चार मन घी, पांच सेर कपूर, एक सेर केसर और दो तोले कस्तूरी डाली गई। चरू और घृत की पुष्कल आहुतियों से हुत स्वामीजी का शव भक्तजनों के नेत्रों कसमक्ष अपने कारणों में विलीन हो गया।

स्वामी जी की अस्थियों का चयन करके उन्हें शाहपुराधीश के उद्यान में गाढ़ दिया गया। (यह उद्यान पुष्कर जाने वाली सड़क पर आना सागर के किनारे है। अब उसका नाम ऋषि उद्यान है।) इस प्रकार भारत के उद्धारक, वेदज्ञान के प्रसारक और युगप्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती का देहान्त हुआ। एक युग समाप्त हो गया।

जो देदीप्यान प्रकाश महर्षि ने दिया, उसी के फलस्वरूप देश जागा, स्वाधीन हुआ और उदित हुआ नया युग- स्वर्णयुग।

चार लाख रुपये के सहयोग का आह्वान, क्या वेद प्रेमी जन देगें इस पर ध्यान ?

परमपिता परमात्मा की अमर वाणी वेद को देश विदेश में आर्य हिन्दू परिवारों तथा ज्ञान पिपासु जिज्ञासु जन तक पहुंचाने के अभियान में दयानंद संस्थान विगत तीस वर्षों से सतत प्रयत्नशील है। **अब तक लगभग दो लाख परिवारों एवम् अनेक मंदिरों और देवालयों में वेद का पावन आलोक फैलाने की अपनी उपलब्धि** पर दयानंद संस्थान स्वयं को गौरवान्वित अनुभव कर सकता है। जहां यह सत्य है, वहां यह भी एक सुस्पष्ट तथ्य है कि संस्थान के सहयोगियों और जनज्ञान के सैकड़ों पाठकों ने मुक्त हस्त से जो योगदान दिया है, उसी का यह सुखद परिणाम है।

अब संस्थान ने चारों वेदों का हिन्दी भाषा भाष्य को कम्प्यूटर कम्पोजिंग की विधा के माध्यम से अधिक आकर्षक रूप में जन साधारण को उपलब्ध कराने का निश्चय किया है। कार्य प्रारम्भ कर दिया है। इसकी संपन्नता के लिए **लगभग चार लाख रूपए की धनराशि अपेक्षित है। यदि केवल अस्सी संपन्न बंधु पांच-पांच हजार रूपए** की सहयोग राशि प्रदान करें तो यह लक्ष्य पूर्ण हो सकता है। ग्यारह हजार देने वालों के चित्र भी छापे जायेंगे।

हमारा अनुरोध है उन सबसे जो **"वेद की ज्योति जलती रहेगी"** का जय घोष और निनाद अपनी पूरी शक्ति से गुंजाते हैं। हमारा आग्रह है उन सबसे जिन्होंने अपने परिश्रम से धनोपार्जन किया है और **जो दो हाथों से कमाओ और सहस्त्र हाथों से दान दो** के वैदिक आह्वान को व्यवहार में उतारने को तत्पर हैं। हमारा अनुरोध आप स्वीकार करेंगे, यह हमारा विश्वास है।

यह याचना नहीं-कर्तव्य पालन का है आह्वान्।
क्या वेद अनुरक्त जन देंगे इस पर ध्यान॥

पांखडों के तूफान अज्ञान की आंधी, अंध विश्वासों के बढ़ते चरण नए - नए भगवाओं की छलभरी सेना के विरुद्ध है संघर्ष का यह क्षण, सहयोग का हाथ बढ़ाइए-प्रभु का आशीर्वाद पाइए।

अपनी सहयोग राशि "दयानन्द संस्थान" के नाम मनिआर्डर बैंक ड्राफ्ट अथवा देहली के चैक द्वारा भी भेज सकते हैं।

दयानन्द संस्थान, २२८६ आर्य समाज मार्ग, करोल बाग, नई दिल्ली -५
दूरभाष : ५७२४७४१, ५८१५४५७

महानक्रांतिधर्मी दुर्गा भाभी : जिनकी अब स्मृतियां ही शेष हैं

एक दीप बुझ गया : जला हजारों बातियां

❑ शिव कुमार मिश्र

शहीदेआज़म भगतसिंह के युग की अन्तिम कड़ी दुर्गा भाभी अब नहीं रहीं। इस वीरांगना ने तीस के दशक में अनेक विस्मयकारी चर्चित सशस्त्र संघर्ष की घटनाओं में यशस्वी भूमिका अदा की थी। पति भगवतीचरण वोहरा की शहादत और सांडर्स वध के बाद लाहौर से कलकत्ता तक का सफर इतिहास की अविस्मरणीय घटना है जिस ने दुर्गा भाभी का नाम सशस्त्र संघर्ष के इतिहास में अमर बना दिया है।

दुर्गा भाभी साहस, त्याग और संकल्प की प्रतिमूर्ति थीं। शहीद भगवतीचरण वोहरा ने अपनी सहधर्मिणी को क्रान्ति पथ की क्रान्ति नायिका बना दिया था। पति के मार्ग दर्शन में दुर्गा भाभी ने सशस्त्र संघर्ष की स्फूर्ति दायिनी परम्पराओं से अपने को जोड़ा था। इन्हीं परम्पराओं से सरोकार कायम कर यह पंजाब केसरी लाला लाजपतराय की मर्मान्तक मौत से विचलित हो गयी थीं। जब चन्द्रशेखर आजाद और भगत सिंह ने लाला जी की मौत के लिए जिम्मेवार अंग्रेज सांडर्स की हत्या का अनुष्ठान रचा था तब इस अनुष्ठान में दुर्गा भाभी का योगदान भी इतिहास के पन्नों में अंकित है।

सांडर्स की हत्या के बाद भगत सिंह को कलकत्ता भेजने का फैसला हुआ। दुर्गा भाभी भगतसिंह की 'छद्म' पत्नी बन कर कलकत्ता भेजी गयीं। राजगुरू घरेलू नौकर बन कर गये थे। तब कलकत्ता में कांग्रेस अधिवेशन हो रहा था। भगवतीचरण वोहरा कलकत्ता में ही थे। भगवतीचरण भाभी के इस काम को देख कर बेहद खुश हुए और स्टेशन पर ही भाभी के कन्धे पर हाथ रख कर बोले- "तुम्हें आज समझा हूं।" क्या भगवतीचरण वोहरा के परिवार के इस संघर्ष को कभी भुलाया जा सकता है ?

क्रान्ति नायक भगवतीचरण वोहरा असाधारण चिन्तक थे। गांधी जी ने क्रान्तिकारियों के योगदान का विरोध किया तब भगवतीचरण ने 'बम का दर्शन' लेख लिख कर गांधी मत का खण्डन किया था। लेख में वोहरा ने जोर देकर लिखा था : "वायसराय पर आक्रमण की घटना के बाद कांग्रेस और गांधी जी ने क्रान्तिकारियों की आलोचना और निन्दा का एक बवंडर खड़ा कर दिया है। क्रान्तिकारी अपने विचारों की आलोचना और विचार विनिमय से नहीं कतराते परन्तु हमारे विरूद्ध दुष्प्रचार द्वारा जो लांछन लगाये जा रहे हैं, उन का निराकरण करना और जनता के निर्णय के लिए वास्तविक स्थिति प्रकट करना आवश्यक है।

क्रान्तिकारियों पर हिंसात्मक होने का लांछन लगाया जाता है। हिंसा और अहिंसा का अर्थ क्या है? हिंसा का अर्थ है, शारीरिक बल द्वारा अन्याय करना। क्रान्तिकारी ऐसा नहीं कर रहे हैं। साधारणतः अहिंसा का अभिप्राय समझा जाता है, स्वयं कष्ट उठा कर अपने प्रतिद्वन्दी का हृदय आत्मिक शक्ति द्वारा बदल कर वैयक्तिक अथवा राष्ट्रीय उद्देश्य को पूरा करना। क्रान्तिकारी भी अपने विश्वास के अनुसार न्याय की मांग करते हैं, उस के लिए अनुरोध और तर्क करते हैं। वे उद्देश्य के लिए अपनी मानसिक और शारीरिक शक्ति का पूर्ण उपयोग करते हैं और अपने उद्देश्य के लिए कष्ट उठाने या बलिदान हो जाने में किसी से पीछे नहीं हैं। क्रान्तिकारियों के विचार और व्यवहार से आप सहमत हों या असहमत परन्तु उनके व्यवहार को हिंसा कह देना अनुचित है। सत्याग्रह का अर्थ है सत्य के लिए आग्रह करना। सत्य के लिए आग्रह केवल आत्मिक बल से ही क्यों किया जाय ? शारीरिक बल का भी उपयोग क्यों न किया जाये ? क्रान्तिकारी अपने विश्वास के अनुसार सत्य, न्याय और देश की स्वतंत्रता के लिए उपाय की उपेक्षा करना उचित नहीं समझते। वे अपनी सम्पूर्ण आत्मिक शक्ति, नैतिक और शारीरिक शक्ति को उद्देश्य पूर्ति में लगा देना चाहते हैं।"

भगवतीचरण वोहरा का उपर्युक्त लेख क्रान्तिकारियों के चिन्तन को उजागर करता है। क्रान्तिकारी राष्ट्रीय आजादी के लिए सर्वस्व की बाजी लगा रहे थे। और स्वाधीन भारत को शोषण रहित समाज में रूपान्तरित कर देना चाहते थे। लेकिन देश आजाद तो हो गया पर आजादी के अरमान अभी अधूरे हैं।

जब देश स्वतन्त्र हुआ तब दुर्गाभाभी की आयु ४० वर्ष थी। लखनऊ में क्रान्तिनायक शिव वर्मा, दुर्गा भाभी, यशपाल और प्रकाशवती पाल (यशपाल की पत्नी) का गुट था। शिव वर्मा ने अपने आप को सर्वहारा वर्ग की राजनीति से जोड़ा तो यशपाल लेखन में जुट गये। तब दुर्गा भाभी ने शिक्षिका का पेशा अपनाया। लखनऊ में 'सिटी मांटेसरी स्कूल' की स्थापना हुई। दुर्गा भाभी ने भविष्य के भारत को संवारने और शिक्षार्थियों में सद्गुण पैदा करने के लिए अपने आप को शिक्षा से जोड़ा था। इसी स्कूल की बिल्डिंग में शिव वर्मा ने दुर्गा भाभी की मदद से शहीद स्मारक व स्वतन्त्रता संग्राम शोध केन्द्र की स्थापना की। शोध केन्द्र ने इतिहास के अनेक अनछुए प्रसंगों को अपने लेखन का विषय बनाया था। शिव वर्मा अपने जीवन के अन्तिम क्षणों तक लेखन में जुटे रहे।

यशपाल का 'सिंहावलोकन' भगवान दास माहौर- सदाशिव राव मलकापुर की 'यश की धरोहर' बनारसी दास चतुर्वेदी द्वारा सम्पादित 'शरीर ग्रन्थ माला' और शिव वर्मा ने 'सरदार भगतसिंह की संकलित रचनाऐं रची थीं। काले-पानी में बिताये दारूण क्षणों को शिवदा ने "मौत का इन्तजार" रेखा चित्र लिख कर जीवंत बना दिया था।

संस्मृतियां में शिव वर्मा ने शहीद भगवतीचरण वोहरा सम्बन्धी संस्मरण के शुरू में कहा है : "भगवती चरण वोहरा से मेरा आमने-सामने का परिचय कभी नहीं हुआ। लेकिन भगत सिंह और सुखदेव के कानपुर आने पर जब भी कभी सैद्धांतिक प्रश्नों पर चर्चा होती तो किसी न किसी रूप में भगवतीचरण का जिक्र वे लोग अवश्य करते।"

भगवती चरण वोहरा क्रान्तिकारी आन्दोलन के सिद्धांतकार थे। नौजवान भारत सभा का नीति वक्तव्य भी वोहरा जी ने ही लिखा था। गांधी के लेख का जवाब भी उन्हीं की पैनी कलम का कमाल था। क्रान्ति पथ पर अपने रक्त का तर्पण कर भगवतीचरण अदृश्य लोक में चले गये। दुर्गा भाभी ने भी सुखमय भारत के अरमान संजोये थे। वह मजहबी उन्माद और जातीय तनाव से मुक्त प्रबुद्ध भारत की रचना की पक्षपर थीं और उन के जीवन का अन्तिम लक्ष्य शोषण रहित समाज था। वह पद, पैसा और प्रतिष्ठा की कायल नहीं थीं। उनका मनोरथ मनुजता की सेवा था।

आज दुर्गा भाभी नहीं हैं। उन का व्यक्तित्व और कृतित्व की आभा का आलोक है। इसी आलोक में नये भारत की रचना के अरमान मचल जाते हैं। यह आकांक्षा उस वीरांगना की थी जिस ने आजादी की राह में अपना पति गवां दिया था। जिसने-योद्धा भगत सिंह, राज गुरु, और सुखदेव को फांसी पर चढ़ते देखा था। शायद शहीद की स्मृति में ही काजी नलरूल इस्लाम ने "अग्नि वीणा' में लिखा था :

फांसीर मञ्चें गेये गेलो जारा जीवनेर जय गान।
आसिअलक्षे दांडा ये है तारा दिवे कौन प्रतिदान ?

(फांसी केमंच पर जो जीवन के जयगान गाकर चले गये, वही लोग अलक्ष में मानव दृष्टि के परे आकर खड़े हुए हैं? तुम उन्हें प्रतिदान में क्या दोगे ?)

जस्टिस कालोनी, गाजियावाद

सर्वोपरि महर्षि दयानन्द

—खुशहाल चंद्र आर्य

ऋषिवर, तेरी तुलना नहीं हो सकती किसी एक व्यक्ति, महान् से।
तेरी तुलना संभव है, सूर्य चन्द्रमा, पृथ्वी और आसमान से॥
तेरी तुलना श्री राम से करूं, वह कृष्ण जैसा था कूट नीतिवान् नहीं,
तेरी तुलना करूं कृष्ण से, उसने रखा मर्यादा का इतना ध्यान नहीं,
दयानन्द, तेरे अन्दर दोनो के समस्त गुण, पाये जाते हैं समान से.....१
ऋषिवर, तेरी तुलना नहीं हो सकती.....
तेरे तुल्य समझूं मैं बुद्ध को, आदि शंकर जैसा था विद्वान् नहीं,
तेरी तुलना-करूं शंकर से, वह बुद्ध जैसा था दयावान् नहीं,
तेरी अन्दर दोनों के गुण थे, कह सकते हैं हम स्वाभीमान से -२
ऋषिवर, तेरी तुलना नहीं हो सकती.....
तेरी तुलना करूं भीम से, उसने रखा ब्रह्मचर्य व्रत महान् नहीं,
तेरी तुलना करूं भीष्म से, उसने अन्याय पक्ष लेकर रखा अपना सम्मान नहीं,
दोनों के गुण विद्यमान् थे, पता लगता है आपके व्यक्तित्व महान् से-३
ऋषिवर, तेरी तुलना नहीं हो सकती .....
तेरी तुलना कालीदास से करूं, उसमें चाणक्य जैसा देश स्वाभिमान नहीं,
तेरी तुलना करूं चाणक्य से, उसमें मिलता सहनशीलता गुण प्रधान नहीं
दोनों के गुण पाये जाते हैं आपका जीवन चरित्र पढ़ते हैं जब ध्यान से -४
ऋषिवर, तेरी तुलना नहीं हो सकती.....
तेरी तुलना करूं चैतन्य सैन से, जिसमें भारतीय संस्कृति पर था स्वाभिमान नहीं।
तेरी तुलना करूं गांधी से, जिसने सोचा तुष्टिकरण का परिणाम नहीं,
दोनों के गुण भलिभांति जाने जाते, आपके किये जन कल्याणी काम से - ५
ऋषिवर, तेरी तुलना नहीं हो सकती.....
'खुशहाल' ने खोल लिया सारा इतिहास, इस प्यारे देश की शान का,
कोई भी व्यक्ति पाया नहीं, ऋषि दयानन्द के चरित्र के समान का,
अब इच्छा होती है, तुलना करूं सर्वगुण सम्पन्न, शुद्ध स्वरूप द्युतिमान से - ६
ऋषिवर, तेरी तुलना नहीं हो सकती.....

उप-प्रधान आर्यसमाज बड़ा बाजार, कलकत्ता -७

सामयिक चिंतन

जहां से चले थे वहीं आ गए हम

एक और जनादेश

-- श्याम माथुर

अब जबकि अटल विहारी वाजपेयी के नेतृत्व में केन्द्र में चौबीस दलों की साझा सरकार सत्ता संभाल चुकी है, यह राजनीतिक यक्ष प्रश्न अब भी कायम है कि आखिर हाल के चुनावों से हमें क्या हासिल हुआ। सत्ता के निकट पहुंचे राजनीतिक दल अपनी-अपनी उपलब्धियों के आंकड़े गिना सकते हैं और वोटों के प्रतिशत में उलझा कर आम लोगों को बहला सकते हैं। तमाम छोटे-बड़े नेता भी अपना जनाधार और विकसित होने का दावा कर सकते हैं। जो लोग संसद के दरवाजे पर दस्तक देने में नाकामयाब रहे, वे आत्म मंथन या आत्म विश्लेषण में लीन होने का स्वांग रच सकते हैं और दूरदर्शन समेत सभी टीवी चैनल चालीस घंटे के चुनावी प्रसारण और उसमें आए 'कमर्शियल ब्रेक' से हासिल मोटी रकम का ब्यौरा पेश कर सकते हैं। मगर **मतदाता की झोली में क्या गिरा ? वही साझा सरकार और लगभग वही चेहरे। लगता है, जैसे चुनावी कवायद के नाम पर हम पिछले दिनों गोल खंभे के इर्द-गिर्द चक्कर काटते रहे और अब घूम-फिर कर वहीं पहुंच गए हैं, जहां से शुरू हुए थे।** कुल जमा उपलब्धि यही रही कि देश ने अब तक के सर्वाधिक कटुतापूर्ण चुनाव झेले और इस कटुता के दंश का असर अब भी कहीं-कहीं नजर आ जाता है।

अगर हम मार्च १८ - ९८ के हालात को याद करें, तो देखते हैं कि स्थितियां कमोबेश वही हैं। **भारतीय जनता पार्टी और उसके सहयोगी दलों को मतदताओं ने एक और मौका अवश्य दे दिया है, मगर वोटर ने उन्हें चेतावनियां भी दी हैं। इनमें कुछ संकेत तो ऐसे हैं, जिन्हें किसी सूरत में नजर अंदाज नहीं किया जा सकता।**

भारतीय जनता पार्टी के लिए यह बात परेशानी का सबब होनी चाहिए कि चुनावों में पार्टी के जनाधार में जहां मामूली वृद्धि हुई, वहीं सहयोगी दलों ने भाजपा के ही सहारे अपने जनाधार को बहुत व्यापक कैसे बनाया। भाजपा आज भी वहीं है, जहां पिछले साल थी (तब उसके सांसदों की संख्या १८१ थी, इस बार यह आंकड़ा १८२ पर आकर ठहर गया) इतना अवश्य हुआ कि पिछले दफा उसके सहयोगी दलों की संख्या १७ थी, इस बार २४ है और सत्ता की राजनीति ने और जोर मारा तो यह संख्या २८ के पार जा सकती है। पिछली बार जयललिता के नेतृत्व वाली अन्नाद्रमुक भाजपा के साथ थी। इस बार द्रमुक के एम. करूणानिधि ने भाजपा से हाथ मिलाया और उसका उन्हें बहुत लाभ हुआ। लोगों को याद होगा कि ये वही करूणानिधि हैं, जो इससे पहले भाजपा को अल्पसंख्यक और दलित विरोधी पार्टी ठहराते थे। भाजपा के साथ दोस्ती करने का लाभ द्रमुक को तो खूब हुआ, मगर भाजपा कुल मिलाकर घाटे में रही। तमिलनाडु की कुल ३९ सीटों में से इस बार राजग को २६ सीटें हासिल हुई, जबकि पिछली बार तमिलनाडु के २८ सांसदों का समर्थन अटल विहारी वाजपेयी के साथ था। यह अलग बात है कि इन्हीं सांसदों के समर्थन वापस लेने के बाद वाजपेयी सरकार का पतन हुआ और नए चुनाव का माहौल तैयार हुआ। कमोबेश ऐसे ही हालात आंध्रप्रदेश में नजर आए, जहां तेलुगूदेशम और उसके नेता मुख्यमंत्री एन. चन्द्रबाबू नायडू का करिश्मा फिर सामने आया। अन्य राज्यों में जहां सत्ता विरोधी लहर नजर आ रही थी और मतदाताओं ने सत्तारूढ़ दलों के खिलाफ वोट डाले, वहीं आंध्र में लोगों ने एक बार फिर तेलुगूदेशम को ही चुना और चन्द्रबाबू नायडू को एक और मौका दिया। **आंध्र में राजग गठबंधन को कुल ४२ में से ३६ सीटों पर विजय हासिल हुई और कांग्रेस को सिर्फ ५ सीटों पर ही तसल्ली करनी पड़ी। पिछले चुनाव में कांग्रेस के पास २२ सीटें थीं और तेलगूदेशम तथा भाजपा के खाते में क्रमशः १२ और ४ सीटों का आंकड़ा था।** विधानसभा चुनाव के नतीजे भी इस बार तेलुगूदेशम-भाजपा गठबंधन के पक्ष में रहे और उन्हें १९२ सीटों पर विजय हासिल हुई। इस तरह भाजपा से हाथ मिलाने के बाद तेलुगूदेशम ने अपने जनाधार को और व्यापक बनाया है।

देश के संसदीय इतिहास में संभवतः यह पहला मौका था जब चुनाव किन्हीं मुद्दों पर आधारित नहीं थे। और व्यक्ति केन्द्रित लड़ाई लड़ी गई। व्यक्तिगत दोषारोपण जम कर हुए और एक-दूसरे के खिलाफ कटुतापूर्ण वचनों का इस्तेमाल भी खूब हुआ। मगर सुखद बात यह रही कि मतदाताओं पर इन बातों का बहुत अधिक असर नहीं पड़ा। वे अपने वरिष्ठ नेताओं की विदूषक जैसी हरकतों का लुत्फ तो उठाते रहे, मगर उन्हें गंभीरता से नहीं लिया। जब फैसले की घड़ी आई, तो मतदाता ने अपने विवेक का बेहतर इस्तेमाल किया और चुनाव मैदान में उतरे अ-गंभीर प्रत्याशियों को धूल चटा दी। भाजपा के नितीश भारद्वाज

को ही लें। टीवी धारावाहिक में कृष्ण की भूमिका निभाने वाले नितीश अपने मतदाताओं को इतना मूर्ख समझ बैठे कि प्रचार के दौरान जब वे भाषण दे रहे होते, तब बैटरी चलित 'सुदर्शन चक्र' को वे अपने एक हाथ में थामे रहते। मतदाताओं ने नितीश को नकार दिया और सुदर्शन चक्र को भी ठिकाने लगा दिया। पूर्व मिस इंडिया नैना बलसावर के साथ भी यही हुआ। दलितों की हिमायती बहुजन समाज पार्टी ने नैना को टिकट दिया था, मगर मतदाताओं ने इनके खिलाफ फैसला सुनाया और जता दिया कि मतदाताओं को बुद्धू समझने वाले नेता और दल खुद ही मूर्ख हैं।

मतदाताओं के विवेकपूर्ण व्यवहार के कुछ और उदाहरण। **स्थिरता का दावा करने वाली कांग्रेस को इस बार मतदाताओं ने सबक सिखा दिया। पार्टी ने एक के बाद एक कई गलत फैसले किए और लगातार यह भ्रम पाले रखा कि मतदाताओं को आसानी से मूर्ख बनाया जा सकता है।** पहले वाजपेयी सरकार को गिराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। फिर हरियाणा में बंसीलाल सरकार को समर्थन देकर पन्द्रह दिन में ही समर्थन वापस लेने का अदूरदर्शितापूर्ण कदम उठाया। लोगों को समझ में आ गया कि कांग्रेस कैसे सत्तारूढ़ सरकारों को अपनी तिकड़म से अपदस्थ करती है। केन्द्र में संयुक्त मोर्चा सरकार को गिराने का उदाहरण भी जनता के सामने था। नतीजा यह रहा कि हाल के चुनावों में पार्टी को बुरी तरह पराजय का सामना करना पड़ा और **एक सौ चौदह वर्ष पुरानी कांग्रेस पार्टी को सिर्फ ११२ सीटों पर ही संतोष करना पड़ा।**

उधर, सुब्रह्मण्यम स्वामी, जो वाजपेयी सरकार को गिराने के निरन्तर प्रयास करते रहे और जयललिता की शह पाकर घटिया दर्जे की राजनीति करते रहे, वे इन चुनावों में अपनी जमानत भी नहीं बचा पाए। मतदाताओं का संदेश साफ है कि ऐसे तिकड़मी और मौकापरस्त लोगों की उन्हें कोई जरूरत नहीं है। जयललिता ने यह चुनाव कांग्रेस के साथ मिलकर लड़ा था और मतदाताओं ने उन्हें भी यह अहसास करा दिया कि देश को अस्थिरता की तरफ ले जाने वाले नेताओं की जगह कहां है।

मतदाताओं के इस व्यवहार को लेकर राजनेता भले ही परेशान नजर आएं, मगर समाजशास्त्री और राजनीति विज्ञान के पण्डित इसी में भारतीय लोकतंत्र का भविष्य देखते हैं। इन लोगों का मानना है कि जिस तरह मतदाताओं ने कम संख्या में मताधिकार का प्रयोग किया, उसी से साबित हो गया था कि मौजूदा राजनीतिक माहौल से वे बुरी तरह खिन्न हैं। वर्ष ९८ में हुए चुनावों के दौरान ६१ फीसदी से अधिक मतदाताओं ने अपने मताधिकार का इस्तेमाल किया था। मगर इस बार यह प्रतिशत ५७ के आसपास ही रहा। जाहिर है कि चुनाव के प्रति आम मतदाताओं के मन में बहुत अधिक उत्साह नहीं रह गया है। वोट नहीं डालने के और भी कई कारण हो सकते हैं, मसलन चुनावी हिंसा और खून-खराबे की आशंका तथा उपयुक्त उम्मीदवार का न होना आदि। लेकिन कुछ ऐसे कारण भी होने ही चाहिएं, जिसके आधार पर मतदाताओं से कहा जा सके कि वे वोट अवश्य डालें।

राजस्थान के संदर्भ में यह चुनाव कई लिहाज से महत्वपूर्ण रहा। कुछ अर्सा पहले ही प्रचण्ड बहुमत के साथ राज्य में सत्ता की बागडोर संभालने वाली कांग्रेस पार्टी को इन चुनावों में करारी हार का सामना करना पड़ा और भाजपा ने १६ सीटें जीत कर यह दावा किया कि मतदाताओं ने कांग्रेस सरकार के कुशासन के खिलाफ वोट दिया है। मगर जानकार लोगों का कहना है कि जातिवादी राजनीति ने भी इन चुनावों में अहम भूमिका निभाई और कांग्रेस की हार का यह प्रमुख कारण बनी। अगर वाकई ऐसा हुआ है, तो इसे गंभीर खतरे की घंटी समझना चाहिए। कहीं ऐसा न हो कि यह प्रदेश भी अब बिहार और उत्तर प्रदेश की राह पर चल निकले, जहां जाति आधारित राजनीति के कारण आपसी वैमनस्य और कटुता का माहौल बन चुका है और छोटे-छोटे गुटों में लामबंद होकर लोग एक-दूसरे के खिलाफ जहर उगल रहे हैं। बहरहाल, यह आशा की जानी चाहिए कि वाजपेयी के नेतृत्व में राजग सरकार अपना कार्यकाल पूरा करेगी, फिर भी जो हालात सामने हैं उनसे मुंह मोड़ने को भी समझदारी नहीं कहा जा सकता। **तेलुगूदेशम पार्टी ने राजग सरकार को सत्ता से बाहर रहते हुए मुद्दों पर आधारित समर्थन देने की बात कह कर संदेह और आशंकाओं को जन्म दे दिया है।** पिछली बार तृणमूल कांग्रेस ने भी सत्ता में शामिल होना स्वीकार नहीं किया था मगर इस बार पार्टी ने सत्ता में भागीदारी स्वीकार की है और पार्टी प्रमुख ममता बनर्जी ने कैबीना मंत्री का पद स्वीकार कर एक नई शुरूआत की है। इससे भाजपा को भी राहत मिली है और एक साल बाद पश्चिम बंगाल में होने वाले विधानसभा चुनाव के लिए जमीन तैयार करने को मौका भी पार्टी को अभी से मिल गया है।

नई सरकार में तत्काल कोई विद्रोह उठ खड़ा होगा इसकी आशंका तो अभी नहीं है, मगर भाजपा के सत्ता-प्रबंधक अगर कमजोर पड़े तो आने वाले समय में सरकार को मुश्किलों का सामना अवश्य करना पड़ सकता है।

(राजस्थान पत्रिका, जयपुर से साभार)

पुरातन भारतीय राजाओं का इतिहास – खण्ड -२

(पौराणिक जंजाल से भारत के अतिप्राचीन इतिहास को उभारने का प्रयास)

— ज्ञानचन्द्र

प्रथम मुद्रा

वैवस्वत मनु एवं उनकी संतति का इतिवृत्त पिछले लेख में राजा सत्यव्रत एवं उनकी विशाल नौका का कथानक गत सृष्टि का अंतिम राज चरित्र था। अतः हमारा भारत के पुरातन राजाओं का इतिहास वस्तुतः इस प्रथम मुद्रा से प्रारंभ होता है।

मनु या संस्कृत में मनुः का 'म' कट कर नुः या नूह हो गया। जिसके बहुत गीत बाइबल व कुरान में गाए गए हैं। यदि बाइबल और कुरान से भारतीय मनु या उनके नूह और नोहा की कथा की तुलना करें तो महत्त्व व सत्यासत्य का निर्णय स्वयं ही हो जाएगा। इन कथाओं को जानने का स्रोत हमारे पास मुख्य रूप से पुराण ही हैं, गौण रूप से ब्राह्मण और आरण्यक हैं। क्योंकि महर्षि दयानन्द सरस्वती ने वेदों में इतिहास नहीं माना अतः मनु, मत्स्य, नौका, भयानक जगतिक बाढ़ आदि शब्दों की विद्यमानता के बावजूद हम इन्हें वेदार्थ करते समय दूसरे अर्थ में ही लेते हैं। ऐतिहासिक अर्थ में नहीं।

पुराणाधार होने से इस कथानक में कुछ विचित्र या अविश्वसनीय प्रसंग आना अपरिहार्य है। परन्तु कथानक को जानने और उसका स्रोत अविच्छिन्न रख कर कम से कम हम कथानकों और इतिहास को तो जान लें- यह समझकर हमने पुराण कथाओं से समझौता किया है। कृपया विज्ञात्मा पाठक भी मूल लक्ष्य - भारतीय इतिहास की घटनाएं जानना सामने रख कर इसे पढ़ें। प्रत्येक छोटी- बड़ी मान्यता का युक्ति तर्क हम यहां प्रस्तुत नहीं कर रहे। क्योंकि न प्रसंग है न प्रयोजन और न स्थान। अतः मान्यताओं और आस्थाओं के सरल-संक्षिप्त समाधान पर कुछ ही शब्द व वाक्य देते हुए हम कथा के स्वरूप पर ही गतिमान रहेंगे।

राजा सत्यव्रत एक राजर्षि थे। उन्हें तन मन व प्राणऊर्जा के अनेकों योग-साध्य रहस्य ज्ञात भी थे एवं हस्तगत भी थे। स्वेच्छा से एक देह त्याग कर दूसरी देह की तैयारी के लिए नए माता-पिता के द्वारा जन्म लेना ही 'परकाय प्रवेश' की योगकथित क्रिया है। पूरे वयस्क शरीर से दूसरी पूरी वयस्क जीवित या मृत देह में प्रवेश, एक अवैदिक और असंभव प्रक्रिया है। जो योग शास्त्र असम्मत है। जैसा शंकराचार्य के जीवन में लिखा प्रसिद्ध है। वह या तो कपोल कल्पित है या संभव है कि अपने मन के एक चैतन्य भाग को और प्राण ऊर्जा को संक्षिप्त रूप से उन्होंने मृत राजा में स्थापित किया हो क्योंकि प्रत्येक मन, प्राण व चैतन्य का विशिष्ट घनत्व, आकार व विवरण होता है और वह समानान्तर देह में ही रह सकते हैं।

राजा सत्यव्रत ने अपने योग-सिद्ध कला-विज्ञान द्वारा सूर्य की जीवनदायक रश्मियों के योगसाध्य संग्रह द्वारा पुरानी देह को त्याग दिया एवं नवीन गर्भ में स्वयं को स्थापित कर दिया। इस नवजन्मित व्यक्ति का नाम हुआ, वैवस्वत" अर्थात् "विवस्वान द्वारा जन्मित"। सूर्य की दिव्य सवित्री-शक्ति द्वारा नवजन्म प्राप्त व्यक्ति का नाम ही था "वैवस्वत"।

जैसा कि पहले कह आए हैं, प्रत्येक सृष्टि व समयावलय के गुण-धर्म, नियम-सिद्धान्त व विधि-विधान भिन्न होते हैं। छठी सृष्टि के गुण-धर्मों से बने शरीर नवीन सप्तम सृष्टि के लिए अनुपयुक्त थे एवं असंबद्ध थे। अतः गहन यौगिक प्रक्रियाओं, तप-सिद्ध सत्य-संकल्प की सहायता से 'वैवस्वत' का नया देह बना। द्रविड़ राजा सत्यव्रत के 'वैवस्वत मनु' के रूप में नव-देह धारण के साथ ही सप्त ऋषियों ने भी अपने स्वरूपों, शरीरों को नव युगानुरूप परिवर्त्तित कर लिया। आज के मानव के आदि पूर्वज उन सप्त ऋषियों के नाम हैं- अंगिरा, अत्रि, पुलह, वशिष्ठ, क्रतु, मरीचि, पुलस्त्य।

वैवस्वत मनु का ही एक प्रसिद्ध नाम है "श्राद्धदेव" मनु की धर्म पत्नी का नाम था 'श्रद्धा'। वैवस्वत मनु एवं अंगिरा आदि ऋषियों ने अपने योग बल से व तपश्चर्या की शक्ति से नव सृष्टि रचना प्रारंभ की।

सप्तम सृष्टि के आदि पुरुष वैवस्वत मनु के कोई संतान न हुई। सप्तऋषियों में से एक परम तेजस्वी व तीक्ष्णप्राण मुनि वशिष्ठ ने अपना तप प्रभाव प्रकट किया। शुकदेव के ककड़दादा, व्यास के परदादा, पराशर के दादा और शक्ति के पिता महर्षि वशिष्ठ भारतीय पुरातन ऋषियों में श्रेष्ठ विज्ञान विद्, रहस्यज्ञान दक्ष, योगाचार्य एवं वैवस्वत मनु के पुरोहित थे। गुह्यज्ञान की श्रेष्ठ शक्ति से सम्पन्न व महान ऋषि श्रेष्ठ मन्त्र वेत्ता वशिष्ठ ने संतान की इच्छा से वैवस्वत मनु के निमित्त

विशिष्ट रासायनिक, भौतिक, मनो-आध्यात्मिक परियोजना को सम्पन्न किया। इस प्रकार की जटिल व कठिन प्रक्रिया का नाम 'पुत्रेष्टि यज्ञ' था। 'यज्ञ' अर्थात् जगत् की मूल कारण, मूलभूत चेतना, सचेतन शक्ति और दिव्य अग्नि को एकाग्र, संग्रहीत एवं इच्छानुसार क्रिया-फल-प्रदायक बना सकने की पद्धति और विधि -व्यवस्था।

इस 'यज्ञ' द्वारा राजा वैवस्वत मनु पुत्र की कामना कर रहे थे। परन्तु उनकी पत्नी श्रद्धा के मन में 'कन्या' की तीव्र कामना थी। अतः पूरी साधना व यज्ञ प्रक्रिया को उसने कन्यार्थक ढंग से पूरा किया। विदुषी और वेदज्ञ "श्रद्धा" ने एक सुन्दर कन्या को जन्म दिया।

अत्यन्त समर्थ वेद -विज्ञ पुरोहित महानात्मा वशिष्ठ पर राजा मनु का पूर्ण विश्वास था। अतः पुत्र के स्थान पर कन्या होने से उन्हें बहुत आश्चर्य हुआ। उन्होंने वशिष्ठ से कहा कि इतनी परीक्षित और उपयुक्त वैदिक क्रिया-प्रणाली का यह विपरीत परिणाम कैसे हुआ। वशिष्ठ योग के गहन ज्ञाता थे। उन्होंने ध्यान के द्वारा विगत काल दृष्टि योग से सारा रहस्य जान लिया। सृष्टि विज्ञान एवं मानव देह विज्ञान के अपने श्रेष्ठ ज्ञान द्वारा उन्होंने मन्त्र, औषधि एवं संचेतना विज्ञान द्वारा 'इला' नामक उस कन्या को 'पुरुष' में परिवर्तित कर दिया। स्त्री से पुरूष बने इस व्यक्ति का नाम 'सुद्युम्न' रखा गया।

विशाल नौका द्वारा तथा अत्यन्त ऊंचे पर्वतों के कारण बची, जल प्रलय के बाद की प्रजा अब तक काफी बढ़ चुकी थी। कुरान व बाइबल में भी नूह की आयु बहुत लंबी लिखी है। पुराणों में भी बहुत दीर्घ आयु लिखी है। परन्तु हम वेद समर्थित चार सौ वर्ष की आयु ही मानते हैं। 'सुद्युम्न' के युवा व समर्थ हो जाने पर वैवस्वत उन्हें प्रजा व राज्य का भार संभाल कर वन प्रस्थान कर गए। सुद्युम्न के कई लघु भ्राता भी थे।

राजा सुद्युम्न एक दिन धनुष, बाण व कवच आदि से सज्जित होकर कुछ मंत्रियों व अनुचरों के साथ वन में शिकार खेलने गए। क्रमशः आगे बढ़ते हुए वे बहुत दूर गहन वन में एक विचित्र वनस्थली में पहुंच गए। पहाड़ियों से घिरी उस चमत्कारी वनस्थली स्थान का प्रभाव, शतावरण और पर्यावरण ऐसा था कि उसमें प्रवेश करते ही कोई भी जीवधारी नर से मादा में बदल जाता था। राजा सुद्युम्न तत्काल मंत्रियों व अनुचरों सहित नारियों में बदल गए। राजा बहुत खिन्न हुए।

महान तपस्वी एवं दुर्धर्ष वैज्ञानिक वशिष्ठ ऋषि ने पुनः उनकी सहायता की। उन्होंने अपनी तप कुशलता व रसायन विज्ञान द्वारा उन्हें पुनः पुरुष बना दिया। परंतु इस प्रक्रिया में उन्हें सर्वांश सफलता न मिली। राजा कभी स्त्री और कभी पुरुष स्थित में बदलता रहता था। उन्हें जनता से पूरा पुरुषवत् सम्मान फिर न मिल पाया।

राजा सुद्युम्न के उत्कल, गय तथा विमल या विनताश्व तीन पुत्र थे। उत्कल ने वन काट कर उत्कला अर्थात् उड़ीसा प्रदेश बसाया और वहां राज्य किया।

राज कुमार 'गय' ने गया नामक राज्य बसा कर वहां निवास किया। विमल पश्चिम दिशा में चला गया।

सुद्युम्न के राज्य त्याग ने व उसके पुत्रों के अलग राज्य बसा लेनेसे वैवस्वत मनु ने अन्य पुत्रों, सद्युम्न के लघु भ्राताओं को राज्य देने का विचार किया। सुद्युम्न के एक छोटे भाई प्रबन्ध ने शूद्रवृत्ति स्वीकार कर ली थी। वह गृहत्यागी, तपस्वी व महात्मा होकर प्रसिद्ध आत्मज्ञानी ऋषि हुआ। मनु का सबसे छोटा पुत्र 'कवि' अंतस्थ अग्नि की साधना-उपासना में ही रुचिवान् था। वह भी वनवासी हो गया था तथा उसने किशोर अवस्था समाप्त होते होते इच्छा मृत्यु का वरण कर लिया था।

एक अन्य मनु पुत्र 'करूष' ने 'कारूष' नामक तेजस्वी क्षत्रियों की परम्परा चलाई। वे उत्तरापथ के निवासी राजागण रहे तथा विद्या एवं विद्वानों के पोषक रहे।

"धृष्ट" नामक मनुपुत्र से "धार्ष्ट" नामक श्रत्रिय जाति प्रारंभ हुई जो दो-तीन पीढ़ियों के बाद वेदवादी ब्राह्मण हो गए और उन्होंने क्षत्रिय कर्म त्याग दिया।

मनु पुत्र नरिष्यन्त का पुत्र हुआ चित्रसेन। उसका अपना अलग वंश चला। इसी वंश के एक राजा देवदत्त के पुत्र अग्निवेश्य ने राजकर्म में रुचि न लेकर तपस्या व ब्रह्मज्ञान को अपना कर्म क्षेत्र बनाया। वह महर्षि जातूकर्ण्य के नाम से प्रसिद्ध हुआ। जातूकर्ण्य से ब्राह्मणों का प्रसिद्ध 'अग्निवेश्यान्' गोत्र प्रारंभ हुआ।

एक मनुपुत्र शर्याति की वेदों पर अपार श्रद्धा थी। वह महान वेदज्ञ व उत्तम रहस्य ज्ञाता विद्वान था। उसने अंगिरा गोत्र के जगत् प्रसिद्ध ऋषि यज्ञ से गहन व जटिल समस्याओं के समाधान में महान यश प्राप्त किया था।

शर्याति की कन्या, सुन्दरी सुकन्या ने भूल से बाँबी में बैठे एक ऋषि की आंख फोड़ दी। इसके दण्ड स्वरूप शर्याति को उस सुकन्या नामक पुत्री का च्यवन नामक उन्हीं ऋषि के साथ विवाह करना पड़ा। च्यवन ऋषि गूढ़ज्ञान, अथर्व विद्या, आयुर्विद्या के बहुत बड़े ज्ञाता थे। उन्होंने अपनी इन गहन वेद आधारित दिव्य विद्याओं से स्वयं को युवा बना लिया था।

अपने ज्ञान में बूढ़े च्यवन ऋषि से विवाह की गई कन्या, सुकन्या से मिलने शर्याति एकबार च्यवन के यहां गए। वहां जब उन्होंने अपनी पुत्री को एक युवक के साथ पत्नी भाव में बैठे देखा तो बहुत क्रुद्ध हुए। परंतु बाद में सुकन्या द्वारा यह प्रमाणित कर देने पर कि पुनर्योवित हो वही बूढ़े ऋषि च्यवन ही हैं तो राजा शर्याति को आनन्द मिश्रित आश्चर्य हुआ।

शर्याति के उत्तान बर्हि, आनर्त्त, भूरिषेण नामक तीन पुत्र थे। आनर्त्त का रेवत नामक समर्थ पुत्र था। उसने समुद्र के मध्य द्वीप पर कुशस्थली नगरी बसायी थी। उसके कई पुत्रों में बड़े का नाम था ककुद्मी अथवा रैवतक। ककुद्मी की रेवती नामक श्रेष्ठ गुण सम्पन्न कन्या थी। वह इतनी योग्य, समर्थ व कलावती-गुणवती थी कि उसके योग्य वर ही राजा को प्राप्त न हुआ।

विज्ञानाधारित सापेक्षवाद के सिद्धांत तथा चतुर्थ आयामों और अन्य आयामों के विचित्र सिद्धांतों में पुराकाल से ही वैदिक विद्वानों की श्रद्धा है। अपने इस भौतिक तृतीय आयाम से राजा रैवतक या ककुद्मी मानव सृष्टि के मूल आयाम, जिसे योग की भाषा में मानव के सूक्ष्म सांचों का लोक कहते हैं, योग बल द्वारा कन्या समेत प्रवेश कर गए। वे यह जानना चाहते थे कि उनकी कन्या के योग्य वर यदि बना है तो वह कहां है। जब यह वर ज्ञान प्राप्त कर वे वापिस इस स्थूल भौतिक लोक में आए तो समय की सापेक्ष गति के कारण यहां बहुत काल व्यतीत हो चुका था। वापिस आए तो उनका राज्य, उनके सभी प्रियजन व प्रजा काल कवलित हो चुके थे।

राजा ककुद्मी ने तब उस समय के एक श्रेष्ठ पुरुष, श्री कृष्ण के बड़े भ्राता बलभद्र या बलराम से अपनी कन्या रेवती का विवाह कर दिया। इसीलिए बलराम का एक नाम रेवतीरमण भी है। राजा रैवतक हिमालय में तप करने चले गए। वैवस्वत मनु के दस पुत्रों में से एक था नभग। उसका पुत्र नाभाग कहलाया। नाभाग के साथ एक विचित्र घटना घटी। नाभाग वेद व योग की तीव्र इच्छा के कारण किसी ऋषि आश्रम में योग व रहस्य विद्याओं का ज्ञान प्राप्त करने चला गया व बहुत काल वहीं रहा। जब वह लौटा तो उसके भाइयों ने पिता की सारी सम्पत्ति आपस में बांट ली एवं नाभाग के लिए कुछ नहीं छोड़ा। नाभाग ने अपना हिस्सा मांगा तो भाइयों ने कहा कि तू अब धन की आशा छोड़ दे। हम अपने वृद्ध पिता को तुझे देते हैं, तेरे हिस्से में पिता जी ही आए हैं। नाभाग ने बुरा न माना और पिता की सेवा में लग गया। एक दिन उसके पिता नभाग ने उससे कहा कि बेटा आंगिरस गोत्र के ब्राह्मण वंशी कुछ लोग एक महान 'यज्ञ' कर रहे हैं परन्तु प्रत्येक छठे दिन पूर्णाहुति पर उनसे कोई भूल हो जाती है। तुम जाकर मेरे बताए ये दो विशिष्ट वैदिक सूक्त उन्हें सिखा दो तो वे अपने अभीष्ट लक्ष्य में सफल हो जाएंगे। नाभाग ने जाकर वैसा ही किया। यज्ञ सफल होने पर उन आंगिरस गोत्रीय ब्राह्मणों ने उसे अपार धन दिया।

नाभाग का पुत्र था महात्मा स्वभाव का राजा अम्बरीष। वे अत्यन्त उदार, सत्योपासक व तपस्वी क्षत्रिय थे। तपस् ऊर्जा उनके पूरे शरीर से झलकी पड़ती थी। उनके पास अपार सम्पत्ति एवं बहुत सी दुलर्भ वस्तुएं थीं। फिर भी मनस्वी राजा में न आसक्ति थी न घमण्ड। अम्बरीष का राज्य पृथ्वी के समस्त महाद्वीपों तक फैला हुआ था।

एक बार महान क्रोधी ऋषि दुर्वासा ने राजा अम्बरीष को बिना कारण शाप देना चाहा। परंतु राजा के शाप से तनिक भी भयभीत न होने से उन्होंने एक भयंकर आसुरी माया प्रकट करके राजा को नष्ट कर देना चाहा। परन्तु परमेश्वर के अटल विश्वासी राजा अम्बरीष का 'कृत्या' नामक वह माया सृष्टि कुछ न बिगाड़ सकी।

अम्बरीष के तीन पुत्र हुए। विरूप, केतुमान व शम्भु। विरूप का पुत्र था पृषदश्व। पृषदश्व का पुत्र रथीतर था। रथीतर सन्तान विहीन था। उसकी वंश परंपरा की रक्षा के लिए, राजा की प्रार्थना पर महर्षि आंगिरस ने नियोग विधि द्वारा राजा के यहां पुत्र उत्पन्न किए। नियोग द्वारा प्राप्त संतानों को स्त्री के पति का ही गोत्र मिलता है। परंतु आंगिरसों की श्रेष्ठता व तीव्र प्रताप के कारण उन संतानों को आंगिरस गोत्र का ही माना गया। *(मुद्रा -२ अगले अंक में)*

— श्री अरविन्द चेतना समाज, ६५६२/९,
चमेलियाना रोड, दिल्ली-११०००६

परमात्मा की अमर वाणी
चारों वेदों का हिन्दी भाष्य
लागत मूल्य १६०० रु० अभी १२०० रु० में
आज ही अपने परिवार में लायें।

विश्व को भारत की देन

— विश्वम्भर प्रसाद 'गुप्त बंधु'

जर्मनी में विश्व-इतिहास से संबंधित एक पत्रिका में 'भारत का योगदान' शीर्षक से नीचे लिखे हुए कुछ तथ्य (जो पुष्पांकित हैं) प्रकाशित हुए थे। एक भारत-हितैषी सुश्री संगीता ने उस लेख की प्रतियां अनेक देशों में फैले हुए अपने मित्रों को इस अनुरोध के साथ भेजीं कि वे भी इनका व्यापक प्रचार-प्रसार करें। उसी क्रम में अमेरिका के एक मित्र श्री सुभाषचंद्र ने एक प्रति हमें भी भेज दी।

हमने कुछ और सुसंगत तथ्य जोड़कर इसे लेख का स्वरूप दे दिया है। यद्यपि सभी तथ्य इतने महत्वपूर्ण हैं कि एक-एकपर स्वतंत्र निबंध हीं नहीं ग्रंथ तक लिखे जा सकते हैं और लिखे भी गए हैं, फिर भी ज्ञान का प्रसार करने के विश्व-मैत्री-मंडल के अनुरोध का सम्मान करते हुए यहां उल्लेख मात्र से ही संतोष किया जा रहा है। तथ्य ये हैं :-

१. विश्व के ज्ञात इतिहास के पिछले १०,००० वर्ष की अवधि में भारत ने कभी किसी देश पर आक्रमण नहीं किया। प्रेम और सद्भावना से ही अपने विचार और विश्वास विश्व में फैलाए हैं।

२. संसार का प्रथम विश्वविद्यालय तक्षशिला में ईसा से ७०० वर्ष पूर्व स्थापित हुआ था जिसमें संसार भर के १०,५०० से अधिक विद्यार्थी ६० से अधिक विषयों पर अध्ययन करते थे। ईसा-पूर्व चौथी शती में स्थापित नालंदा विश्वविद्यालय शिक्षा के क्षेत्र में प्राचीन भारत की महानतम उपलब्धि थी।

३. "हिमालय के प्रांगण में इसे प्रथम किरणों का दे उपहार,
उषा ने हंस अभिनंदन किया और पहिनाया हीरक-हार;
जगे हम, लगे जगाने विश्व; लोक में फैला फिर आलोक,
सप्त स्वर सप्त-सिंधु में उठे, अखिल संसृति हो उठी अशोक।"
—प्रसाद।

४. ५,००० वर्ष से भी पूर्व, जब बहुत सी संस्कृतियां खाना-बदोशों और जंगलियों की ही थीं, भारतीयों ने सिंधु-घाटी में हड़प्पा-संस्कृति (सिंधु-घाटी-सभ्यता) विकसित की हुई थी।

५. सभ्यता का प्रारंभ सर्वप्रथम, ईसा के भी कई हज़ार साल पहले, भारत में हुआ था। उस समय के जो भी अवशेष मिलते हैं, उनसे सिद्ध होता है कि जो कुछ था, विलक्षण प्रतिभा और उत्कृष्ट वास्तु-कौशल से आद्योपांत परिपूर्ण था। ज्ञात इतिहास-काल की ही कृतियां,तथा अजंता-इलौरा की गुफ़ाएं, देश भर में फैले विशाल मंदिर, विजय-स्तंभ, चैत्य, स्तूप और स्मारक विश्व में बेजोड़ हैं।

६. आरंभ से ही भारतीय जन-जीवन नितांत आडंबर-हीन किंतु अत्यंत समृद्ध, उन्नत और श्रेष्ठ था।

७. संस्कृत सभी यूरोपीय भाषाओं की मां है। फ़ोर्ब्स पत्रिका (जुलाई १९८७ अंक) के अनुसार कंप्यूटर साफ्टवेयर केलिए संस्कृत सबसे अधिक उपयुक्त भाषा है।

८. संस्कृत ज्ञान की, विद्वानों की भाषा है। संस्कृत से ही जन-सामान्य के लिए 'हिन्दी' भाषा का वैज्ञानिक विधि से विकास किया गया है। अतः यह भारत की राष्ट्रभाषा है और विश्वभाषा बनने की ओर बढ़ रही है। डा. जयंती प्रसार नौटियाल के अनुसार "हिन्दी जाननेवालों की संख्या विश्व में सबसे अधिक है। भाषा जाननेवालों की दृष्टि से हिंदी का विश्व में पहिला स्थान है" (देखिए गृह-मंत्रालय, भारत-सरकार की पत्रिका 'राजभाषा भारती 'अक्तूबर-दिसंबर १९९७ अंक पृ. ४०)। संस्कृत की भांति यह भी कंप्यूटर के लिए सबसे अधिक उपयुक्त सिद्ध होगी।

९. चिकित्सा का मनुष्य को ज्ञात सर्वप्रथम विज्ञान आयुर्वेद है। आयुर्वेद के पितामह 'चरक' ने २,५०० वर्ष पूर्व इस ज्ञान का संकलन किया था। आज-कल आयुर्वेद संसार में तेज़ी से अपना न्यायसंगत स्थान प्राप्त कर रहा है।

१०. सुश्रुत शल्य-क्रिया के पितामह थे। २,६०० वर्ष पूर्व वे और उनके समय के चिकित्सक जटिल शल्य-क्रियाएं, यथा प्रसूतज (सीज़ैरियन), मोतियाबिंद, कृत्रिम अंग, अस्थि-भंग, पथरी, और प्लाटिक शल्य तथा मस्तिष्क की शल्य-क्रियाएं संपन्न करते थे। सुनकारियों (अनिस्थीसिया) के प्रयोग से वे भली भांति परिचित थे। शल्य-क्रिया के सवा-सौ से अधिक उपकरणों का प्रयोग करते थे। शरीर- रचना-विज्ञान, शरीर-क्रिया-विज्ञान, निदान-शास्त्र, भ्रूण-विज्ञान, पाचन-क्रिया, चयापचय, आनुवंशिकी और असंक्रामिता संबंधी गहरी जानकारी भी बहुत सी पुस्तकों में मिलती है।

११. भारत का चित्र आज-कल ग़रीब और अविकसित देश के रूप में भले ही प्रस्तुत किया जा रहा हो, १७ वीं शताब्दी के आरंभ में, अंग्रेजों के आक्रमण से पहिले तक यह संसार का सबसे धनी देश था। कोलंबस भारत की ओर इसकेधन के कारण ही आकर्षित हुआ था।

१२. नौचालन की कला का जन्म ६,००० वर्ष पूर्व सिंधु नदी में हुआ था। संस्कृत शब्द नौगतिः से ही 'नैविगेशन' और नौ से ही नैवी' बने हैं।

१३. मोहन-जो-दड़ो और हड़प्पा की खुदाइयों से मिले अवशेषों से भारतीय नगर-नियोजन की उत्कृष्टता प्रकट होती है। पुरानी से पुरानी सभ्यता का दम भरनेवाले देशों के पास भी ऐसा कुछ नहीं था जिसकी तुलना उन भारतीय नगरों से की जा सके।

१४.मिहिरावली (दिल्ली) का प्रसिद्ध लौह-स्तंभ न केवल आकार आरे वज़न की दृष्टि से, बल्कि रचना की दृष्टि से भी अद्वितीय है कि एक हज़ार साल की सर्दी-गर्मी- वर्षा का प्रकोप सहन करने पर भी उसमें अभी तक ज़ंग भी नहीं लगा।

१५. वायुयानों का प्रयोग रामायण- और महाभारत- काल तक भली भांति होता था। दिव्य अस्त्र-शस्त्र और ब्रह्मास्त्र तक न केवल ज्ञात थे, वरन् प्रयोग किए जाते थे। ब्रह्मास्त्र (संभवतः अणु-अस्त्र) का प्रयोग सामान्यतया वर्जित था।

१६. पृथ्वी का सूर्य की परिक्रमा करने में लगनेवाले समय की गणना खगोल-विज्ञानी स्मार्ट से सैकड़ों साल पहिले भास्कराचार्य ने कर ली थी। ५ वीं शताब्दी में उसने यह समय ३६५.२५८७५६४८४ दिन निकाला था।

१७. भारत में अंकगणित का अविष्कार हुआ था; आर्यभट्ट ने शून्य का अविष्कार किया था।

१८. 'पाई' (वृत्त की परिधि और व्यास के संबंध) का मान यूरोपीय गणितज्ञों से बहुत पहिले छठी शताब्दी में बोधायन ने निकाल लिया था। और पाइथागोरस की साध्य नाम से प्रसिद्ध संकल्पना की भी उसी ने व्याख्या कर दी थी।

१९. बीजगणित, त्रिकोणमिति, और कलन-गणित (कैलकुलस) भारत की ही देन हैं। द्विघाती समीकरण श्री धराचार्य ने ११ वीं शताब्दी में हल किए थे। ईसा से ५,००० वर्ष पूर्व वैदिक युग में हिंदू लोग $१०^{१२}$ तक की बड़ी संख्याओं का प्रयोग करते थे और उन्होंने उनके अलग-अलग नाम भी दे रखे थे जबकि यूनानी और रोमन लोगों द्वारा बड़ी से बड़ी १०६ तक की संख्याओं का प्रयोग होता था। और आज भी बड़ी-से- बड़ी $१०^{३३}$ तक की ही संख्याओं का प्रयोग होता है।

२० स्थानीय मान और दशमिक प्रणाली ईसा से १०० वर्ष पूर्व भारत में विकसित की गई थी।

२१. शतरंज या अष्टपाद का अविष्कार भारत में हुआ था।

२२. अमेरिका के रत्न-विज्ञान-संस्थान के अनुसार १८८६ ई. तक हीरा भारत से ही संसार भर में जाता था।

२३. अमेरिकी संस्था आई.ई.ई.ई. ने सिद्ध कर दिया है कि रेडियो-संचार की खोज प्रोफ़ेसर जगदीश चंद्र बसु ने की थी, न कि मारकोनी ने, जैसी भ्रांत धारणा एक शताब्दी तक वैज्ञानिकों में फैली रही है।

२४. सिंचाई के लिए बांधों और जलाशयों का निर्माण सबसे पहिले सौराष्ट्र (भारत) में हुआ था।

२५. १५० ई. के राजा रुद्रदमन के अनुसार रैवतक पर्वत पर 'सुदर्शना' नाम की सुंदर झील चंद्रगुप्त मौर्य के ज़माने में बनाई गई थी।

भारत-विषयक उक्तियां

१. अलबर्ट आइन्स्टीन ने कहा था : हम भारतीयों के बहुत ऋणी हैं। उन्होंने हमें गिनना सिखाया जिसके बिना कोई भी सार्थक वैज्ञानिक खोज नहीं हो सकती थी।

२. मार्क ट्वेन ने कहा था : भारत मानवता का पालना है, बोली का जन्म-स्थान है, इतिहास की माता है, दंत-कथाओं की दादी है और परंपराओं की परदादी है। मानव-इतिहास की सबसे अधिक मूल्यवान और सबसे अधिक शिक्षाप्रद सामग्री केवल भारत में ही संग्रहीत है।

३. फ्रांसीसी विद्वान् रोमेन रोलैंड ने कहा था : यदि पृथ्वी पर कोई भी एक स्थान ऐसा है जहां प्राचीनतम काल से, जबसे मानव ने अस्तित्व की कल्पना आरंभ की, मानव-जीवन के सारे स्वप्न संजोए हुए हैं, तो वह भारत है।

४. अमेरिका में चीन के पूर्व-राजदूत हू शिह ने कहा था : एक भी सिपाही सीमा-पार भेजे बिना ही भारत २० शताब्दियों से चीन को जीतकर उसपर सांस्कृतिक अधिकार किए हुए है।

५. महात्मा गांधी ने कहा था : भारत मेरे लिए दुनिया का सबसे प्यारा देश है, इसलिए नहीं कि यह मेरी मातृ-भूमि है, बल्कि इसलिए कि मैंने सबसे ज़्यादा अच्छाई इसी में पाई है।

६. भारत की यात्रा में आए हुए कंप्यूटरों के राजा बिल गेट्स ने कहा था : विश्व में एक मात्र संस्कृत ही पूर्ण रूप से शुद्ध एवं वैज्ञानिक भाषा है, यह बात मैंने अपने सुपर-कंप्यूटर पर सिद्ध की है।

७. आशुलिपि के अविष्कारक सर आइजक पिटमैन ने कहा है : देवनागरी दुनिया में सभी लिपियों से अधिक वैज्ञानिक तथा पूर्ण है।

८. अमेरिकी अंतरिक्ष-संस्था 'नासा' के वैज्ञानिक रिक ब्रिग्ज़ ने कहा है : संस्कृत भाषा और पाणिनि का व्याकरण कंप्यूटर के लिए सर्वश्रेष्ठ है।

९. पुरातत्व-वेता सर जान मार्शल ने लिखा है : शिल्प, वास्तु और भवन-निर्माण की रचनाओं को, जो भारत में जगह-जगह विद्यमान हैं, देखकर कोई भी उनके निर्माताओं के ज्ञान की गहराई, विचारों की ऊंचाई और कला की प्रौढ़ता से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। वे यदि आज जीवित होते तो हमारे इस विकसित विश्व में भी कुछ अपने सीखने-योग्य न पाते।

तो आइए, सत्य-ज्ञान का प्रसार करके भारत-विरोधियों को मिथ्याप्रचार का मुंहतोड़ जवाब देने के लिए आप भी विश्व-मैत्री-मंडल के साथ हो लें, क्योंकि वेद के अनुसार "विश्वामित्रस्य रक्षति ब्रह्मेदं भारतं जनम्" अर्थात् विश्व-मैत्री की महाशक्ति ही इस भारत-भा = प्रकाश या ज्ञान (की प्राप्ति और प्रसार) में + रत = लगे हुए- लोगों की रक्षा करती है। इस लेख की प्रतियां बनवाकर अन्य पत्र-पत्रिकाओं में अथवा अन्य प्रकार से प्रकाशित कराएं। गोष्ठियों और सम्मेलनों आदि में भी इनका प्रचार किया जाए।

वी १५४, लोक विहार, दिल्ली - ११० ०३४

महर्षि दयानंद के निर्वाण दिवस पर

— कृष्ण मित्र

दयानन्द के पक्षधरों से ब्रह्मज्ञान के मुखर स्वरों से
ज्ञानवान उन विद्वानों से, वेदव्रती मनु संतानों से
मर्यादित सद्आचरणों से, सृजनशील रचनाकारों से
जागरूक पहरेदारों से, कलमकार का नम्र निवेदन
बतलाएं करके यह चिंतन, सत्यनिष्ठ सन्तान कहां है
अपना हिन्दुस्तान कहां है? संस्कृतियों से, संस्कारों से
कर्त्तव्यों से अधिकारों से, धर्म विहीन राजसत्ता से
विकृतियों की, गुणवत्ता से, पतितोन्मुख जीवन दर्शन से
पापकर्म के आकर्षण से, पग पग गिरते आदर्शों से
ध्वस्त हो रहे उत्कर्षों से, अपराधों से व्यभिचारों से
नित्य घटित अत्याचारों से, पूछो मनु संतान कहां है
अपना हिन्दुस्तान कहां है, धर्म कहां है कर्म कहां है
अनुशासन का मर्म कहां है, कीर्ति कहां है कहो भगीरथ
पावनतम गंगा के तीरथ, कहां गई हिमगिरी सी दृढ़ता
ध्रुवतारे की सी स्थिरता, मां वाणी की स्वच्छ धवलता
चन्द्रकिरण सी वह शीतलता, कहां तपस्या है तर्पण है
पूछो वह वरदान कहां है, अपना हिन्दुस्तान कहां है
दयानंद के आदर्शों का, पावनतम उस संदेश का
जीवन की मर्यादाओं का, नैतिकता की सीमाओं का
उनका हर संकल्प अनूठा, सिहरन भरा विकल्प अनूठा
सरल स्वभावी जीवन का क्रम, जैसे भी हो ले आएं हम
यदि इतना सब हम कर पाएं, प्रगति पथ पर कदम बढ़ाएं
तो यह राष्ट्र समुन्नत होगा, दयानन्द के ब्रह्मव्रत होगा
तब न कहेंगे ज्ञान कहां है, अपना हिन्दुस्तान कहां है।

मनमोहन बैंक एंड कं., १ लायर्स चैम्बर, गाज़ियाबाद

सच्ची तपस्या

प्राचीन काल में काशी में एक धनी ब्राह्मण रहता था। अपार धन-राशि होने पर भी पुत्र न होने के कारण वह दुखी रहता था। तब उसने पुत्र प्राप्ति के लिए कठोर तपस्या की। परिणाम स्वरूप उसके यहां एक सुन्दर और प्रतिभाशाली पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम उसने कृष्ण-कुमार रक्खा।

कृष्ण कुमार जब बड़ा हुआ तो अपनी अपार धन राशि, जो उसके पूर्वजों ने जोड़ी थी, देखकर चकित रह गया। उसने सोचा कि मेरे पूर्वजों ने कौड़ी-कौड़ी जोड़ कर इतना धन जमा किया, परन्तु परलोक वे एक कौड़ी भी साथ न ले जा सके। तब धन जोड़ने से क्या लाभ ? क्यों न इस को दान कर पुण्य कमाऊं जिसे परलोक भी साथ ले जा सकूं। राज आज्ञा प्राप्त कर उसने महादान आरंभ कर दिया। हर याचक को मुंह मांगा धन देता। कोई भी उसके द्वार से खाली हाथ न जाता। परन्तु धन था कि समाप्त ही होने में न आता था। तब उसने सोचा कि जिस धन का मैंने एक बार परित्याग कर दिया, उसका मोह ही क्यों। अतः घर खुला छोड़ कर वह बाहर निकल पड़ा और सन्यास धारण कर हिमालय पर तपस्या करने लगा। उसकी तपोकीर्ति चारों ओर फैली तो देवराज इन्द्र कृष्णकुमार की परीक्षा लेने पहुंचे। उन्होंने वृक्ष की आड़ से कहा—

"यह पुरुष काले रंग का है, इसका भोजन काला है। यह काले देश में रहता है। मुझे एक दम नापसंद है।"

वृक्ष की ओट से आते हुए इन वचनों को सुन कर कृष्ण कुमार को पता लग गया कि देवराज इन्द्र मेरी परीक्षा लेने आये हैं। अतः उसने उत्तर में कहा- "हे वक्ता, व्यक्ति त्वचा से काला नहीं होता। जिसका अन्तर निर्मल है, वह चाहे किसी रंग का हो, ब्राह्मण है। हे सुरेश! वास्तव में काला वह है जो पापकर्म करता है।" और उसके बाद कृष्ण कुमार ने देवराज को शील-धर्म के सभी गुण तत्व बताये। देवराज बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने कृष्ण कुमार से वर मांगने का आग्रह किया। कृष्ण कुमार ने सोचा कि देवराज को शायद मेरी तपस्या के उद्देश्य पर सन्देह हो रहा है, इस लिए वह मांगने की बात कह कर यह मेरी पुनः परीक्षा लेना चाहते हैं। अतः उसने कहा- "हे देवराज इन्द्र! यदि मुझे वर देना है तो मुझे आप पूर्ण रूप से अक्रोधी बना दें। द्वेष, लोभ और मोह से रहित कर दें।" देवराज ने मुस्कुराकर पूछा :-

"हे ज्ञानी ब्राह्मण, क्रोध, द्वेष, लोभ और मोह में तुम्हें भला ऐसे कौन से दोष दिखाई देते हैं, जिन के कारण तुम उनसे छुटकारा पाना चाहते हो ?"

कृष्ण कुमार ने इस परीक्षा सूचक प्रश्न के उत्तर में कहा:- "कटुता से उत्पन्न क्रोध तीव्रगति से बढ़ता है, जिसका परिणाम बड़ा दुखद होता है। इस लिए मैं क्रोध को पसंद नहीं करता। द्वेष के फल स्वरूप पहले वाणी कठोर होती है, फिर घृणा बढ़ती है और घात-प्रतिघात की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। मार-पीट के बाद दंड और अस्त्र प्रहार होता है। इसलिए हे इन्द्र! मुझे द्वेष अत्यन्त अप्रिय है। लोभ में मुझे झूठ दुस्साहस, प्रपंच और वंचना के बीज दिखाई देते हैं। इसलिए मुझे लोभ से घृणा है। मोह एक ऐसी गांठ है जो कालांतर में बहुत दुख देती है। इसलिए मैं मोह से मुक्त रहना चाहता हूं।"

कृष्ण कुमार की ऐसी ज्ञान पूर्ण बातें सुन कर देवराज इन्द्र अति प्रसन्न हुए और उन्होंने पुनः वर मांगने का अनुरोध किया। ब्राह्मण पुत्र ने वर मांगा- "भगवान! मुझे वर दीजिए कि इस जीवन में मेरे कारण किसी के मन या शरीर को कोई कष्ट न पहुंचे।"

इन्द्र सुन का पुलकित हो उठे। उन्होंने सहर्ष "तथास्तु" कहा और आशीर्वाद दिया- "हे मानव, तुम ने जो मांगा वह तुम्हारी महानता का परिचायक है। देवताओं को भी ऐसा वर मांगने की प्रेरणा प्राप्त नहीं होती। प्राणीमात्र को मन, वचन और कर्म से कष्ट न पहुंचाना ही सच्ची तपस्या है। तुम धन्य हो। ❑❑

जनज्ञान के सदस्यों से

डाक व्यय बढ़ जाने से वार्षिक शुल्क की वी.पी. भेजने में अब २२ रुपये लगते हैं अतः मनीआर्डर या दिल्ली के चैक द्वारा शुल्क भेजें। कार्ड पर उत्तर अवश्य देने की कृपा करें। — सम्पादक

डी. एल. एफ कुतुब इन्क्लेव, गुड़गांव

एक आर्य समाज का अभिनव वार्षिकोत्सव

राजधानी दिल्ली की सीमाओं से सटी, सुविशाल क्षेत्र में फैली एक बस्ती डी. एल. एफ. कुतब एन्कलेव। दिल्ली अपने कण-कण में इतिहास के अनेक प्रेरक और उद्वेलक पृष्ठ छिपाए है। इसके साथ जुड़ी है धर्मराज युधिष्ठिर और गांडीवधारी अर्जुन तथा गदाधारी भीम से लेकर अंधे धृष्टराष्ट्र और कुटिलता का पर्याय बने शकुनि तक की कुछ स्मृतियां। दिल्ली की सीमा से सटा गुड़गांव (अतीत का गुरु ग्राम) उस महान आचार्य द्रोण की याद दिलाया है, जिसका शिष्यत्व पांडवों और कौरवों दोनों ने ही ग्रहण किया था।

डी. एल. एफ. कुतुब एन्कलेव फेस-२, गुरुग्राम में एक स्थली पर उस आर्य समाज ने अपना वार्षिकोत्सव आयोजित किया, जिसके पास अपना भवन नहीं है। किंतु उस आर्य समाज की गतिविधियों के सूत्रधार श्री विजेन्द्र सिंघल जो समाज के प्रधान भी हैं, तथा संरक्षक श्री रघुनाथ घई एवम् श्री संजय मेहरा और डा. वी. के गुप्ता आदि की लगन से इस कालोनी का हर भव्य भवन धीरे-धीरे वेदमय होने की संभावना के साकार होने का अश्वासन दे रहा है।

आर्य समाज के संस्थापक देव दयानंद मात्र वेदवादी ही नहीं प्रखर राष्ट्रवादी भी थे। उनके चिंतन में यह सत्य भी सुस्पष्ट है कि वे बलिष्ठ आर्यावर्त, भारत वर्ष या हिन्दुस्थान को ही "वसुधैव कुटुम्बकम" के वैदिक आह्वान की पूर्ति में समर्थ अधिष्ठान मानते थे। उनकी भावनाओं और चिंतन के अनुरूप इस वार्षिकोत्सव का शुभारम्भ ८ अक्टूबर, १९९९ को प्रातः भुवन भास्कर के उर्मि मालाओं के साथ प्राची दिशा में उदय के साथ-साथ एक भव्य पंडाल में आयोजित राष्ट्रोत्थान यज्ञ से हुआ- जिसके ब्रह्मा थे विख्यात आर्य विद्वान् एवम् मनीषी वेदव्रत किशोर जी वानप्रस्थ। इस अवसर पर संगीत की सुमधुर लहरी बिखेरी श्री गुलाब सिंह राघव ने। प्रवचन कर्ता थे विख्यात आर्य विद्वान् डा. प्रेमचंद्र श्रीधर। उनके प्रवचन में वैदिक दर्शन का सार तत्व वर्णित हुआ और उन्होंने राष्ट्र के समक्ष विद्यमान समस्याओं से भी अवगत कराया। शनिवार की सांझ तम ने आवरण धरती पर फैलाया तो 'तमसोमाज्योतिर्गमय' के उद्गाता आर्य समाज के वार्षिकोत्सव के लिए बनाये भव्य मंच से श्री गुलाब सिंह राघव ने गीतों के माध्यम से जागृति का नाद गुंजाया। युवा उपदेशक वीरेन्द्र विक्रम ने वेद को आधार बनाकर राष्ट्र निर्माण के विषय पर विस्तार से प्रकाश डाला। रात्रि में नौ बजे से राष्ट्रीयता का शंखनाद हुआ आंमत्रित कवि गण की वाणी से। अध्यक्ष थे श्री जय भगवान शर्मा और मुख्य अतिथि बनारसी सिंह तथा मंच-संचालन संभाला देश के विख्यात राष्ट्रवादी कवि डा. सारस्वत मोहन मनीषी ने। कवि सम्मेलन का शुभारम्भ डा. सत्यपाल 'बेदार' सरस द्वारा वेद मंत्रों की सरस और सरल भाषा में काव्यमय व्याख्या से हुआ। उनकी एक-एक पंक्ति पर श्रोताओं ने तुमुल करतल ध्वनि कर वायुमंडल को एक नया आयाम दिया। श्री राजेन्द्र राजा की रचनाओं में सामाजिक परिस्थितियों पर गहरा कटाक्ष था तो रसिक रत्नेश ने वातावरण को रसमय बनाया। डा. सत्यप्रकाश बजरंग ने भी अपने कंठ से शक्तिमय स्वर उभारे जबकि श्री कृष्ण गोपाल विद्यार्थी की रचनाओं में वर्तमान का अपच सच मुखर हुआ। श्री विजेन्द्र सिंहल ने अपनी ओजस्वी वाणी से प्रस्तुत रचना में अपने चिंतन-मनन की झलक दी।

श्री कृष्ण मित्र, जो काव्य जगत के जाने माने हस्ताक्षर हैं; अपनी रचनाओं की प्रस्तुति पर सराहना के पात्र बने। श्री रघुनाथ घई की रचनाओं में वर्तमान का बेबाक बखान हुआ। रविवार को प्रातः यज्ञ के उपरान्त वैद्य रामकिशोर जी का आशीर्वादात्मक प्रवचन हुआ तदुपरान्त श्री गुलाब सिंह राघव ने अपने भजनों और गीतों से श्रोताओं को रस विभोर किया।

प्रातः ११ बजे से अपरान्ह एक बजे तक आयोजित हुआ राष्ट्र जागृति सम्मेलन। देश के समक्ष विद्यमान समस्याओं की वक्ताओं द्वारा चर्चा तो की ही गयी, साथ ही उस स्वप्न पर भी उन्होंने प्रकाश डाला, जो उन महान राष्ट्र भक्तों ने स्वतन्त्र भारत के संबंध में अपने नेत्रों में बसाया था, जो दयानंद के स्वातन्त्र्य दर्शन से प्रेरित होकर ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध छिड़े स्वातन्त्र्य यज्ञ में अपने यौवन समर्पित कर कथनी और करनी के

धनी सिद्ध हुए थे। इस सम्मेलन के संयोजक थे श्री विजेन्द्र सिंहल और वक्ताओं में सम्मिलित थे डा. सारस्वत मोहन मनीषी, श्री वीरेन्द्र विक्रम, श्री सीताराम सिंघल, श्री बनारसी सिंह एवम् डा. छवि कृष्ण शास्त्री। वक्ताओं ने अपने भाषणों में विद्यमान स्थितियों पर टीस और वेदना को मुखर किया तथा विश्वास व्यक्त किया कि अन्ततोगत्वा वह अवसर आएगा जब वैदिक-दर्शन से प्रेरित भारत विश्व वंद्य स्वरूप को ग्रहण करेगा। सम्मेलन के अध्यक्ष श्री जयदेव शास्त्री ने अपने अध्यक्षीय भाषण में वेद निहित राष्ट्रवाद का निनाद किया। शांति पाठ के पश्चात् आयोजित प्रतिभोज में आबाल वृद्ध आयंजन की सहभागिता रही। जिनमें आर्य देवियों की संख्या भी पर्याप्त थी तो अनेक युवा और बालक-बालिकाएं भी, जो इस आर्यावर्त के स्वर्णिम भविष्य की आशा हैं।

आर्य समाज डी.एल.एफ कुतुब एन्कलेव, गुड़गांव के वार्षिकोत्सव की कुछ झलकियाँ

आर्य समाज डी.एल.एफ. कुतुब एन्कलेव, गुड़गांव के वार्षिकोत्सव पर आयोजित यज्ञ का एक दृश्य

वार्षिकोत्सव पर आयोजित वैदिक प्रवचन

वार्षिकोत्सव पर आयोजित सामूहिक प्रीतिभोज

आरोग्य वरदायिनी तुलसी

तुलसी एक सर्व परिचित वनस्पति है। किसी भी स्थान पर उगने वाली तुलसी भारतीय धर्म संस्कृति में पवित्र एवं महत्वपूर्ण है। प्रत्येक हिन्दू के घर-आंगन में शोभा, संस्कार, पवित्रता तथा धार्मिकता का अनिवार्य प्रतीक है। भारत में ही नहीं वरन् विश्व के कई अन्य देशों में भी तुलसी को पूजनीय व शुभ माना गया है। समस्त वृक्षों, वनस्पतियों में सर्वाधिक धार्मिक, आध्यात्मिक, आरोग्य लक्ष्मी एवं शोभा की दृष्टि से तुलसी को मानव जीवन में महत्वपूर्ण पवित्र तथा श्रद्धेय स्थान मिला है। प्रदूषित वायु के शुद्धिकरण में भी तुलसी का योगदान श्रेष्ठ है यदि तुलसीवन के साथ प्राकृतिक चिकित्सा की कुछ पद्धतियां जोड़ दी जायं तो प्राणघातक और दुःसाध्य रोगों को भी निर्मूल करने में ऐसी सफलता मिल सकती है जो प्रसिद्ध डॉक्टरों व सर्जनों को भी नहीं मिल पाती।

तुलसी शारीरिक व्याधियों को तो दूर करती ही है, साथ ही मनुष्य के आंतरिक भावों और विचारों पर भी कल्याणकारी प्रभाव डालती है।

अथर्ववेद में आता है : यदि त्वचा, मांस तथा अस्थि में महारोग प्रविष्ट हो गया हो तो उसे श्याम तुलसी नष्ट कर देती है। तुलसी के दो भेद होते हैं : हरे पत्तेवाली और श्याम पत्तेवाली। श्याम तुलसी सौंदर्यवर्धक है। इसके सेवन से रोगिष्ठ त्वचा के सभी रोग नष्ट हो जाते हैं।

चरक सूत्र २७,१६६ में आता है : तुलसी हिचकी, खांसी, विषदोष, श्वास और पार्श्वशूल को नष्ट करती है। यह पित्त को उत्पन्न करती है एवं वात, कफ और मुंह की दुर्गंध को नष्ट करती है।

स्कंदपुराण : २,४,८,१३ एवं पद्मपुराण के उत्तराखण्ड में आता है : जिस घर में तुलसी का पौधा होता है वह घर तीर्थ के समान है। वहां व्याधिरूपी यमदूत प्रवेश ही नहीं कर सकते।

चाय तो हानिकारक है लेकिन चाय के स्थान पर तुलसी आदि से तैयार की जाने वाली वनस्पति चाय लाभ पहुंचाती है। गुर्दे की कार्यशक्ति में वृद्धि करती है। तुलसी के रस में शहद मिलाकर देने-से एक केस में गुर्दे की पथरी छह माह के निरंतर उपचार से बाहर निकल गई थी।

इण्ट्राटेम्कल कैन्सर से पीड़ित एक रोगी पर ऑपरेशन तथा अन्य अनेक उपचार करने के बाद अंत में आशा छोड़ कर डॉक्टरों ने घोषित किया कि रोगी का यकृत खराब हो रहा है। यक्ष्मा में भी वृद्धि हो रही है। अब यह रोग लाइलाज है। तभी एक वैद्य ने उक्त रोगी को पांच सप्ताह तक केवल तुलसी का सेवन करवाया और वह इतना स्वस्थ हो गया कि एक मील तक पैदल चल सकता था। हृदयरोग से पीड़ित कई रोगियों के हाईब्लडप्रेशर तुलसी के उपचार से सामान्य हो गये हैं, हृदय की दुर्बलता कम हो गई है, और रक्त में चर्बी की वृद्धि रूकी है। जिन्हें पहाड़ी स्थानों पर जाने की मनाही थी ऐसे अनेक रोगी तुलसी के नियमित सेवन के बाद आनंद से जाने में समर्थ हुए हैं।

एक लड़का बचपन से ही मंदबुद्धि का था। सोलह वर्षों तक उसके अनेक उपचार हुए किन्तु उसकी बौद्धिक मंदता दूर नहीं हुई। तुलसी के नियमित सेवन से दो ही महीनों के भीतर उसमें बुद्धिमत्ता के लक्षण दिखाई पड़े। समय बीतने पर वह और भी अधिक बुद्धिशाली हो गया।

सफेद दाग या कोढ़ के अनेक रोगियों को तुलसी के उपचार से अद्‌भुत लाभ हुआ है। अनेक दाग कम हो गए हैं और उनकी त्वचा सामान्य हो गई है। प्रतिदिन प्रातः काल खाली पेट पानी के साथ तुलसी की पांच-सात पत्तियों का सेवन करने से बल, तेज और स्मरण शक्ति बढ़ती है। तुलसी के काढ़े में थोड़ी शक्कर मिलाकर पीने से स्फूर्ति आती है और थकान दूर होती है। जठराग्नि प्रदीप्त रहती है। इसके रस में नमक मिलाकर उसकी बूंदें नाक में डालने से मूर्च्छा दूर हो जाती है, हिचकियां भी शांति हो जाती हैं। तुलसी ब्लड कॉलेस्ट्रोल को बहुत तेजी के साथ सामान्य बना देती है। तुलसी के नित्य सेवन से एसिडिटी दूर होती है। पेचिश, कोलाइटिस

आदि मिट जाते हैं। स्नायु का दर्द जुकाम, सर्दी, सफेद दाग, मंदबुद्धि, सिरदर्द आदि में यह गुणकारी है। तुलसी का रस, अदरक का रस एवं शहद समभाग में मिश्रित करके बच्चों को चटाने से विशेषकर सर्दी, दस्त, उल्टी और कफ में लाभ होता है। हृदय रोग और उसकी आनुषंनिक निर्बलता और बीमारी में तुलसी के उपयोग से आश्चर्यजनक सुधार होता है। वजन बढ़ाना हो या घटाना हो, तुलसी का सेवन करें। इससे शरीर स्वस्थ और सुडौल बनता है। मंदाग्नि, कब्जियत, गैस और अम्लता आदि रोगों के लिए तुलसी राम बाण औषधि सिद्ध हुई है।

तुलसी के क्यारे के पास प्राणायाम करने से सौंदर्य स्वास्थ्य और तेज की वृद्धि होती है। तुलसी की सूखी पत्तियों को पीसकर उसके चूर्ण को पाउडर की तरह चेहरे पर रगड़ने से चेहरे की कांति बढ़ती है और चेहरा सुंदर दिखता है। मुहांसों के लिए भी तुलसी खूब उपयोगी है।

काली मिर्च, तुलसी और गुड़ का काढ़ा बनाकर उसमें नींबू का रस मिलाकर, दिन में दो या तीन - तीन घण्टे के अंतर से गर्म-गर्म पीयें, फिर कंबल ओढ़कर सो जाएं। यह मलेरिया को दूर करता है।

श्लेष्मक ज्वर (इन्फ्लुएन्जा) के रोगी को तुलसी का २० ग्राम अदरक का १० ग्राम रस तथा शहद मिलाकर दें। तुलसी की जड़ें कमर में बांधने से स्त्रियों को विशेषत: गर्भवती स्त्रियों को लाभ होता है। प्रसव वेदना कम होती है और प्रसूति भी सरलता से हो जाती है।

तुलसी की पत्तियों का रस २० ग्राम, चावल के मांड के साथ सेवन करने से तथा दूध-भात या घी भात का पथ्य लेने से प्रदर रोग दूर होता है। तुलसी की जड़ के छोटे-छोटे टुकड़े करके पान में सुपारी के तरह खाने से स्वप्नदोष की शिकायत दूर हो जाती है। दमें के रोग में तुलसी का पंचांग, आँक के पीले पत्ते, अडूसा के पत्ते, भंग तथा थूहर की डाली पांच-पांच ग्राम लेकर बारीक चूर्ण बनाकर। उसमें थोड़ा सैंदा नमक डालिए। इसे मिट्टी के बर्तन में भरकर ऊपर से कपड़ा-मिट्टी करके बंद कर दीजिए। केवल जंगली लकड़ी की आग में उसे एक प्रहर (तीन घण्टे) तक तपाइए। ठंडा होने पर उसे अच्छी तरह पीसिए और शिकायत होने पर प्रतिदिन पांच ग्राम चूर्ण शहद के साथ तीन बार लें।

तुलसी की पत्तियों को नीबूं के रस में पीसकर लगाने से, तुलसी का पाऊडर व सूखे आंवलों का पाऊडर पानी में भिगोकर रख दीजिए। प्रातः काल उसे छानकर उस पानी से सिर धोने से सफेद बाल भी काले हो जाते हैं तथा बालों का झड़ना भी रूक जाता है।

तुलसी और अदरक का रस शहद के साथ लेने से उल्टी में लाभ होता है। पेट में दर्द होने पर तुलसी की ताजी पत्तियों का १० ग्राम रस पियें। इस तरह तुलसी बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। आरोग्यता की दृष्टि से इनमें से कुछ अंश ही ऊपर बताए गए हैं। हमें चाहिए कि हम लोग तुलसी का पूर्ण लाभ लें।

भक्ति सत्संग, वेदकथा, वार्षिकोत्सव, में
भजन सत्संग के लिए आमन्त्रित करें।

कंचन कुमार

C-58-A सुदर्शन पार्क, नई दिल्ली -15 फोन 5437058

उपलब्ध भजन कैसेट्स

☐ उड़ेगा हंस अकेला ☐ प्रार्थना सुमन ☐ परदेसी हंसा ☐ सत्संग प्रसाद (I-II)

क्रिया प्रार्थना सभा में भजन सत्संग सेवा भी उपलब्ध है

गायत्री का महत्व

— स्वामी समर्पणानंद

कर्मयोगी कहते हैं कि कर्म करो। भगवान् है या नहीं इस झगड़े में क्या मिलेगा ? भक्तियोगी कहते हैं कि नामभजते रहो। यही सबसे बड़ा कर्म है। परन्तु निरा नाम-भजन तो आलस्य और अकर्मण्यता का ही प्रच्छन्न है और इसीलिए अति भयंकर रूप है। दूसरी ओर भक्तहीन कर्म चाबीहीन घड़ी के समान है, एक बार घड़ी खड़ी हो गई तो दुबारा कौन चलाए ? भक्तिहीन कर्मयोग भारी मूर्खता है। शक्ति का भण्डार तो है पर हम उससे लाभ नहीं उठाते। भगवान् भक्तों की बुद्धि को प्रेरणा देता है परन्तु भक्त नाम आलसी और अकर्मण्य का तो नहीं। **"धियो यो नः प्रचोदयात्"**। हम उसका ध्यान करें जो हमारी बुद्धियों और कर्मों को प्रेरणा दे। यह भक्तियोग है।

परन्तु यह प्रेरणा किस को मिलती है क्या कर्महीन आलसियों को ? कदापि नहीं। प्रेरणा उन्हें मिलती है जो निरन्तर उसे अपने अन्दर धारण करते हैं। यह कर्म योग कैसे है :- प्रभु को अपने अन्दर धारण करना सर्वश्रेष्ठ कर्म है। प्रश्न उठता है कि प्रभु क्या कोई कुर्ता, धोती, पगड़ी एवं अंगरखा है जो धारण किया जाता है। इसका उत्तर वेद इन शब्दों में देता है।

"स्वस्तिपन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव।" ऋ ५.५१.१५

हम सूर्य और चन्द्र के समान स्वस्ति मार्ग पर चलें। इस भाव को ऋ १०.२.३ मन्त्र में इस प्रकार स्पष्ट किया गया है।

"आ देवानामपि पन्थामगन्म, यच्छक्नवाम तदनुप्रवोदुम्।"

हम, जिस सुन्दर शासन व्यवस्था में सूर्य चन्द्रादि देव, उस प्रभु की आज्ञानुसार चलते हैं उसी के अनुसार अपने जीवन-रथ का वहन करने में समर्थ हुए हैं। उतने अंश तक ही हमने देव-मार्ग का अनुसरण किया है।

बस यह अनुसरण कर्म ही मनुष्य को प्रभु से प्रेरणा लेने का अधिकारी बनाता है। इस प्रकार **'धीमहि'** में कर्मयोग और **"धियो यो नः प्रचोदयात्"** में समर्पणात्मक भक्ति-योग का अद्भुत समन्वय है।

यह देवों का अनुचरण, ज्ञान, प्रयत्न और सुख अथवा सच्चिदानन्द इन तीनों अंगों में बंटा हुआ है। प्रभु के जितने गुण वेद में वर्णित हैं, वे ज्ञान, प्रयत्न और सुख इन तीनों अंगों में हैं। हमें सुख-स्वरूप बनना है। इसलिए आवश्यक है कि हम सम्यग् ज्ञान प्राप्त करें और तदनुकूल प्रयत्न अथवा आचरण करें। हमने ठीक ज्ञान और ठीक प्रयत्न किया है या नहीं, इसका प्रमाण है कि हमने पूर्ण सुख प्राप्त किया है या नहीं ? बस यह ज्ञान 'भूः' है, प्रयत्न 'भुवः' है और सुख 'स्वः' है।

यन्नदुःखेन साभिन्नम् न च ग्रस्तमनन्तरम्।
अभिलाषोपनीतम् चतत् सुखं स्वः पदास्पदम्।

बस इस 'भू, भुवः, स्वः, का ही संक्षिप्त रूप 'ओ३म' है। ध्वनि-मात्र का आदि मूल अ और स्थान कण्ठ है। मध्य उ और स्थान मुख का मध्य है। म् सब संगीतमय ध्वनियों का अन्त है और सच पूछिये तो ध्वनि मात्र का अन्त क्योंकि यही एक अक्षर है जो मुख बन्द करने पर भी बोला जा सकता है। इसका स्थान ओष्ठ है। मकार ही एक ऐसा अक्षर है जो मुख बन्द करने पर भी बोला जा सकता है। इसीलिए यह समाप्ति का सूचक है और मधुर होने के कारण संगीतमयता का सूचक है। इसीलिये यह 'स्वः' का अर्थात् परम सुख का प्रतीक है।

यदि इनमें से एक-एक अंग का ही अभ्यास करें तो मनुष्य का पूर्ण परिपाक न होगा। पूर्ण परिपाक करने वाला तो 'भूर्भवः स्वः' का समन्वय है इसलिए इस समन्वय को 'भर्गः' ठीक परिपाक करने वाला कहा गया है।

परन्तु यह रूप पूर्ण रूप से धारण किया गया तब समझना चाहिए जब वह स्वादुतम अन्न के समान आग्रह पूर्वक वरण करके खाया जाय। जो अन्न खिन्न मन से जैसे-तैसे गले के नीचे उतार लिया जाता है वह **'घकेलेन्यम्'** भले ही हो **'वरेण्यम्'** नहीं कहला सकता।

वह स्वाद भी साधारण नहीं अलौकिक हो जिसे तत् कह कर अनिर्वचनीयता का रूप दे दिया जाय। अब इस मन्त्र में परमात्मा को सविता के नाम से कहा गया है, इसलिए इस गायत्री को (गेयगीत को) सावित्री कहा गया है। सविता का अर्थ है शासन का स्रोत 'सू' का अर्थ है शासन करना। सविता का अर्थ हुआ शासन करने वाला। राष्ट्र में जब राजा राज्य के नियमों का निर्माण करता है तब सविता, जब दण्ड देता है तब यम, जब अधिकारों का निर्णय करता है तो 'अर्यमा', जब शक्ति दिखाता है तो इन्द्र कहलाता है। परन्तु इन्द्र को भी शासन सत्ता सविता

से प्राप्त होती है। ऋग्वेद में स्पष्ट शब्दों में कहा है -

सवितायन्त्र पृथिवीमरम्णात ऋ १०.१४९.१

सविता ने राज्य को नियन्त्रित करने वाले नियमों से धरती को रमणीय बना दिया। बस यह नियम बनाने वाला (विधान निर्मात्री सभा का रूप) रूप ही सविता रूप है। हम 'भूः भुर्व स्वः' स्वरूप ओ३म् के उस परिपाक प्रगल्भ सविता रूप को जो अति वरेण्य है सदा धारण करें जिससे समर्पण की भावना पूरी हो और वह हमारी बुद्धियों को मुक्ति-मार्ग पर चलावे।

इस प्रकार- १. ओ३म् — सच्चिदानन्द का विकसित रूप। २. भू— ज्ञान। ३. भुवः — कर्म। ४. स्वः - सुख है। ५. तत्— उस अनिर्वचनीय। ६. देवस्य— दिव्य-शक्ति-सम्पन्न। ७. सवितुः —नियम-निर्माण के अधिष्ठाता के। ८. भर्ग : —परिपाक प्रगल्भ। ९. वरेण्मय् —वरणीयतम रूप को। १०. धीमहि— हम (केवल अकेला मैं नहीं सब) धारण करें। अनुचरण द्वारा आत्मसात् करें। ११. यः— जो। १२. नः हमारी (बहुवचन सर्वभूत हित का सूचक)। १३. धियः —कर्म और प्रज्ञा को। १४. प्रचोदयात् — सन्मार्ग पर चलावे।

इस प्रकार इन १४ अंगों से युक्त गायत्री को श्वास-प्रश्वास के संगीत में मिला कर मनुष्य अपने जीवन में उस स्थान पर जा पहुंचे जहां हमारे जीवन का नेता यह गायत्री मन्त्र हमें पहुंचाना चाहता है। सो इसके पीछे-पीछे (अनु) चलते-चलते वहीं हम स्थित हो जावें जहां इसका ठहरने का स्थान है तो हम कह सकेंगे कि हमने गायत्री का अनु-स्थान-अनुष्ठान कर लिया। यह है गायत्री का अनुष्ठान।

इस लघु लेख की समाप्ति से पूर्व एक बात की ओर विशेष ध्यान दिलाना आवश्यक है इसलिए उसको विशेष रूप से पृथक् करके वर्णन करते हैं। यह है सविता देवता का स्वरूप। परन्तु इसका निरूपण करने से पूर्व हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि यह शब्द किस धातु से बना है। यह शब्द 'सू प्रेरणे' इस तुदादि गण की धातु से बना है। इसकेलिए दो ही प्रमाण पर्याप्त हैं। पहिला तो विश्वानि देव सवितर्दुरि-तानि परासुव यद् भद्रं तन्न आसुव' यह प्रसिद्ध मन्त्र है इसमें, परासुव और आसुव पद स्पष्ट रूप से तुदादिगण की सूचना दे रहे हैं। ऋग्वेद में ४,५३,३ मन्त्र की सविता के साथ पड़ा हुआ प्रसुवन् शब्द स्पष्टतया तुदादिगण की 'सू प्रेरणे' इस धातु की ओर निर्देश कर रहा है। इसी प्रकार ऋग्वेद ३,३३,६ में कवियों की वाग्धारा कहती है— 'तस्य वयम् प्रसवे यामउर्वीः' उस इन्द्र के शासन में हम दूर तक चल रहे है। यहां प्रसव शब्द का अर्थ बच्चा जनना नहीं, किंतु शासन है। इसी प्रकार वेद में **'सवितुः प्रसवेऽश्विनो बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्'** यह तीनों एक साथ आते हैं जिसका कर्म अर्थ है कि यह सविता के शासन में अश्वियों के साधन से पूषा के हाथों से हो रहा है, सो सविता देवता वही है जब किसी राष्ट्र के प्रताप का उदय होता है। उससे पूर्व राष्ट्र के उत्साहमय अभ्युत्थान की उषा आती है फिर राज्य का नियम निर्माण होता है फिर शासन। यही बात ऋग्वेद ५.८२.२ इस मन्त्र के **'अनुप्रयाण मुषसो विराजति'** इन शब्दों में कही है सविता देव उषा के प्रयाण के पीछे विराजमान होता है।

यही बात सायणाचार्य ने ऋग्वेद १०-१३८-१ मन्त्र की व्याख्या में इन शब्दों में स्पष्ट कही है। **उषसः प्रादुर्भावानन्तर्र सूर्यस्योदयात् पूर्वम् यः कालस्याभिमानी देवः सवितोच्चते।** अर्थात् उषा के प्रादुर्भाव के पश्चात् सूर्योदय से जो काल है, उस समय का सूर्य सविता कहलाता है। बस, स्पष्ट है कि व्यक्ति के जीवन से लेकर मानव राष्ट्र के जीवन तक कर्मयोगी के उत्साह के जन्म के पश्चात् कर्म में लगने से पूर्व भावी कार्यक्रम के सम्पूर्ण नियम बना लेना चाहिए। कर्म योग में हाथ-पैर चलेंगे किन्तु उससे पूर्व हमारी बुद्धियों को नियम बनाने के निमित्त ठीक प्रेरणा मिलनी चाहिए, यही सविता देवता का काल है, सो इसी समय **'धियो यो नः प्रचोदयात्'** यह प्रार्थना कितनी ठीक बैठती है। यह सहृदयों के रसास्वादन का विषय है, वाग्विलास का नहीं, बस इसको जान कर सावित्री का मर्म समझ में आता है। प्रभु की कृपा हो कि हम इसे समझ कर गायत्री का ठीक अनुष्ठान करने में समर्थ हों। ❑❑

जन-जन की भाषा है हिन्दी, भारत माता के मस्तक की बिन्दी

हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है। हिन्दी का प्रचार प्रसार करना हम सभी का दायित्व है। अतः आप अपने सभी लेखन कार्य, पत्र तथा निमन्त्रण पत्र अपने हस्ताक्षर आदि देवनागरी लिपी में ही लिखने का निर्णय करें।

— सपादक

शिवाजी की मातृ भक्ति

—दीनानाथ शिवाजीसावंत

एकदम शुद्ध सोने की डली को हाथ से पीटें तो फूट जाएगी और फूट जाएगी — जिसके टुकड़े होंगे, पर सोने के बने बड़े भूखंड भारत देश की विविध दिशाओं और इस भूखण्ड की तीनों दिशाओं में बहने वाले समुद्र के जल में भरे—इस प्रकार के रत्नों से जड़ी वेदी पर राज्याभिषेक के लिए अपनी पत्नी के साथ विराजमान होने से पहले शिवाजी अपनी माता जीजाबाई के चरण छूने और उनका आशीर्वाद प्राप्त करने पहुंचे। शिवाजी के जन्म से लेकर अब तक जीजाबाई आपने लिए (और शिवाजी के पिता से उपेक्षित और अलग रहीं) इस माता के लिए आज कितने अपार हर्ष और खुशी का मौका था। शिवाजी अपनी माता के परम भक्त थे। माता के ही शिवाजी को बचपन से इस वीरता भरी कहानियों और लोरियों की थपथपाहट से इस योग्य बनाया था कि आज वे साम्राज्य की गद्दी पर बैठने लायक बन सके थे।

इस राज्याभिषेक के महोत्सव के शुभ अवसर पर मराठा राजधानी रायगढ़ के १२०० परिवारों को परिवार सहित आमंत्रित किया गया था। सही पर बैठने से पहले शिवाजी और सबसे पहले अपने गुरु समर्थ रामदास जी के चरणों में आशीर्वाद लेने पहुंचे। फिर अपनी माता जीजाबाई के पैर छूने करने पत्नी सहित गये। वह दिन माता के लिए सबसे अधिक गौरवशाली था। कोई भी माँ ऐसे सौभाग्य पर गर्व कर सकती है। अनेक प्रकार के कष्टों में जीवन व्यतीत करते हुए उसने अपने इस इकलौते पुत्र को माता के प्यार के साथ पिता के अभाव को भी दूर किया था। अपनी आशाओं को वह अपने इस बेटे में ही सजोये हुए थी। इस संपूर्ण वे अपनी माँ के स्वप्नों को साकार किया।

संसार के इतिहास में ऐसे व्यक्ति बहुत कम हुए हैं जिनका जन्म राजघराने में न हुआ हो और वे राजगद्दी पर बैठे हों। जीजाबाई ने अपने जीवन के पचास वर्ष अनेक प्रकार की आपत्तियों और दुख दर्द भरी कठिनाईयों में बिता कर आज यह शुभ दिन देखा जब उसका यह पुत्र एक अत्यन्त साधारण और गरीब घर में पैदा हो एक समाट के आसन पर बैठ रहा था। शिवाजी की मातृभक्ति से ही जीजाबाई ने अकेले इन असंख्य दुखों के सागर को पार किया था। ऐसा प्रतीत होता है, अपने जीवन में इस मंगलमय और गौरवपूर्ण दिन को देखने के लिए भगवान ने उसे जीवित रखा था।

शिवाजी को राजगद्दी पर बैठने और अपने पुत्र और वधू को राजा रानी के रूप में देखने और आशीर्वाद देने तथा असीम सुख का अनुभव करने के पश्चात् जीजाबाई राजमाता के रूप में संसार से विदा होने की सर्वा लोक सिधार गयीं। (साभार : प्रेरक जीवन कहानियां)

वेद प्रचार में प्राप्त सहयोग राशि

स्वंभी : वी.एस. रमनेशी, बम्बई ५००१ रु०, आत्मजिज्ञासु धर्मा (यू.एस.ए.) २०५पौंड, रघुनाथ पंडे (गुड़गांव) ५०० रु०, जिलाकी राम क्रिशनी (हिजारबाद) ३०० रु०, डॉ. प्रेमव्रत (शोलापुर, दिल्ली) २५ रु०, अशिमपुरण श्रेष्ठ (दिवंगिया) २५७ रु०, कृष्णलता (सोजपथरान, दिल्ली) २०० रु०, तेजराम भाटी (पाली) २०० रु०, यूशालचन्द (कानपुर) २५० रु०, यदुवमसिंह (रीवा) २५० रु०, जयकिशन धीमान (पचकूला) ११० रु०, रमेशचन्द्र गर्ग (आदमपुर) १२० रु०, भरतसिंह (सिंहभूम) ३१ रु०, ईश्वर सोनी (गढ़हरा) ३० रु०, जे.के. गुप्ता (बुलन्दशहर) ३० रु०, छोटे लाल (सीतापुर) २१ रु०, ब्रेक्ष प्रसाद (सोजाम) २० रु०, गंगा प्रसाद तुमन (दिल्ली) २० रु०।

१०१ रु० रुपये देने वाले सर्वश्री : शंकर लाल पोद्दार (चन्दौली), कृष्णा साड़ी केन्द्र (बमौली), प्रकाशकी (धनबाद), विजय कुमार गुप्ता (हसनपुर), सीताराम शर्मा (रोपड़), सी.आर.डी. ट्रस्ट (दिल्ली)।

१०० रु० रुपये देने वाले सर्वश्री : रमेश अग्रवाल (देहरादून), लालाबाबूमी (नरवला), सीताराम बागड़ी (झुंझनू), चन्द्रेशजालन गुप्त (प्रोलिफ्टलेनगर), हरिचन्द (सुलतानपुर), शांतीलाल भार्य (नवांशहर), डॉ. शान्ति शर्मा (पटना), आर.एस.व्यवा (दिल्ली), राज कुमार भल्ला (दिल्ली), विजय प्रताप भारद्वाज (कांगड़ा), हीरालाल मुरारी लाल (गंगटोक), परमगुरु (लखनऊ)।

५१ रु० रुपये देने वाले सर्वश्री : दयानन्द गुप्ता (आहदरा), सत्यनारायण गुप्ता (जालन्धर), राजकुमार पिन्नल (शिकारपुर), पवन भंवर लाल (बुलढाणा), हरकिशन लाल (राजकोट), प्रमोद शर्मा (इन्दौर), शंकर लाल (रतलाम), धूव कुमार (लोर), हरिराम (धनबाद), बेनीराम (लाहरपुर), चन्द्रपाल सिंह (अलीगढ़), रतिराम शर्मा (दिल्ली), [illegible] (लालकना)।

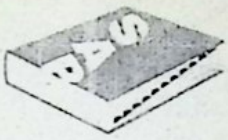

A Statment of My Beliefs

कथन/प्रवाचन — श्रद्धा/विश्वास

स्व मन्तव्यामन्तव्य प्रकाश

—Swami Dayanand Sraswati

"I believe in a religion based on universal and all-embracing principles which have always been accepted as true by mankind, and will continue to command the allegiance of mankind in the ages to come. Hence it is that the religion in qiestion is called the primeval eternal religion, SANATAN DHARMA which means that it is above the hostility of all human creeds whatsoever.Whatever is believed in by those who are steeped in ignorance or have been led astray by sectaries is not worthy of being accepted by the wise. That faith alone is really true and worthy of acceptance which is followed by Aptas i.e., those who are true in word, deed and thought; promote public good and are impartial and learned; but all that is discarded by such men must be considered as unworthy of belief and is false.

My conception of God and all other objects in the universe is founded on the teachings of Veda and other true Shastras, and is in conformity with, the beliefs of all the sages, from Brahma down of Jaimini. I offer a statement of these beliefs for the acceptance of all good men. **That alone I hold to be acceptable which is worthy of being believed by all men is all ages.** I do not entertain the least idea of founding a new religion or sect. My sole aim is to believe in truth and help others to believe in it, to reject falsehood and help others to do the same.k Had I been biased, I would have championed any one of the religions prevailing in India. But I have not done so. One the contrary, I do not approve of what is objectionable and false in the institutions of this or any other country, nor do I reject what is good and in harmony with the dictates of true religion, nor have I any desire to do so, since a contrary conduct is wholly unworthy of man. He alone is entitled to be called a man who possesses a thoughtful nature and feels for others in the same way as he does for liis own self, does, not fear the unjust however powerful but fears the truly virtuous, however weak. Moreover, he should always exert himself to his utmost to protect the righteous, and advance their good, and conduct himself worthily to wards them event hough they be extremely poor and weak and destitute of material resources. On the other hand, he should constantly strive to destroy and oppose the wicked, sovereign rulers of the whole earth and men of great influence and power whatever they be. In other words, a man should, as far as it lies in his power, constantly endeavor to undermine the power of the unjust and to strengthen that of the just. He may have to bear any amount of terrible suffering, he may have even to quaff the bitter cup of death in the performance of this duty, which devolves on him on account of being a man, but he should not shirk it."

King Bhartrihari and other wise men like Vyas & Manu have composed verses on the subject which I subjoin with the hope that they will prove useful -

(1) "The world-wise may praise one or

censure him; fortune may smile on him or frown of him; death may overtake him immediately or he may live for ages, but a wise man, does not swerve from the path of justice." (*Bhartrihari shloka-75, Niti shatak*)

(2) "Let a man never renounce Dharma (righteousness) either through lust or through fear, or through greed or even to save his life, since Dharma is imperishable, while pleasure or pain is perishable, the soul is immortal, while the body is mortal. (*Mahabharata 40-1-12*)

(3) "There is only one true friend that accompanies one even after death. All others desert one as soon as death has overtaken him.(*Manu 8-17*)

(4) " It is truth that conquers, not error. It is the path of rectitude alone that men of learning and piety have trodden, and it is by following this path that the great sages of righteous desires have reached the highest citadel of truth-God." (Manduk Up. 3.1.6)

(5) " Verily there is no virture higher than truth; no sin blacker than falsehood. Verily there is no knowledge higher than truth; let a man, therefore, always follow truth."

Let all men have the same kind of firm faith (in the power of truth and justice) as have been expressed by great souls (in the above verses).

Now I give below a brief summary of my beliefs. Their detailed exposition has been given is Satyartha Prakash at its proper place.

1. He, who is called **Brahm** of the most High; who is paramatma or the Supreme Spirit who permeates the whole universe; Who is a true personification of Existence, conscious-ness and bliss; Whose nature, attributes and characteristics are Holy; Who is Omniscient, Formless, All-pervading, Unborn, Infinite, Almighty, Just and Merciful; Who is the author of the universe and sustains and dissolves it: Who awards all souls the fruits of their deeds in strict accordance with the requirements of absolute justice and is possesed of the like attributes, only Him I believe to be the Great God.

2. I hold that the four Vedas-the repository of knowledge and Religious Truths-are the Word of God. They comprise what is known as the Sanhita-Mantra Portion only. They are absolutely free from error, and are an authority unto themselves. In other words, they do not stand in need of any other book to uphold their authority. Just as the sun(or a lamp) by its light, reveals its own nature as well as that of other objects of the universe, such as the earth-even so are the Vedas.

The commentaries on the four Vedas, viz., The Brahmanas, the six Angas, the six Upangas, the four Up-Vedas, and the eleven hundred and twenty-seven Shakhas, which are exositions of the Vedic texts by Brahma and other great Rishis-I look upon as works of a dependent character. In other words, they are held to be authoritative in so far as they conform to the teachings of the Vedas. Whatever passages in these works are opposed to the Vedic injunction I reject them entirely.

3. The practice of equitable justice together with that of truthfulness in words, deed and thought and the like (Virtues)-in a word, that which is in conformity with the Will of God, as embodied in the Vedas-even that I call **Dharma (Righ)** But the practice of that which is not free from partiality and injustice as well as that of untruthfulness in word, deed and thought,-in a word, that which is opposed to the Will of God, as embodied in the Vedas-even that I term Adharma **(wrong).**

(4) The immortal, eternal Principle which is endowed with attraction and repulsion, feelings of pleasure and pain, and consciousness, and whose capacity for knowledge is limited-only that I believe to be the **soul.**

(5) "God and the soul are two distinct entities by virtue of being different in nature and of being possessed of dissimilar attributes and characteristies. They are, however, inseparable one from the other, being related to each other as the pervader and the pervaded and have cerain attributes in common. Just as a material object has always been and shall always be, distinct from the speace in which it exists and as the two have never been, nor shall ever be one and the same, even so are God and the soul to each other. Their mutual relation is that of the pervader and the pervaded, of father and son and the like.

(6) I hold three things to be beginningless, namely, God, the soul, and Prakriti-the material cause of the universe. These are also known as the eternal substrata. Being eternal, their essential nature, their attributes and their characteristies, are also eternal.

(7) Substances, properties, and characteristies, which result from combination, cease to exist on the dissoltion of the compound. But the power of force, by virtue of which ane substance unites with another, or separates from it, is eternally inherent in that substance, and this power will compel it to seek similar unions and disunions in the future. Unions and disunions, creation and dissolution (of the world) [and birth and death of the soul] have eternally followed each other in succession.

(8) That which results from the combination of different elementary substances in an intelligent manner and in the right proportion and order-even that in all its infinite variety, is called creation.

(9) The **Purpose of creation** is the essential and natural exercise of the creative energy of the Deity. A person once asked another "What is the use of the eyes?" To see with, to be sure," was the reply. The same is the case here, God's creative energy can be exercised and the souls can reap the fruits of their deeds only when the world is created.

(10) The world is created. Its creator is the aforesaid God. The existence of design in the universe as well as the fact that the dead inert matter is incapable of moulding itself into different ordered forms, such as seeds, proves that it must have a creator.

(11) "The earthly bondage (of the soul) has a cause. This cause is ignorance which is the source of sin, as among other things it leads man to worship objects other than God, obscures his intelectual faculties, whereof pain and suffering is the result. Bondage is termed so, because no one desires it but has to under go it.

(12) The **emancipation of the soul** from pain and suffering of every description and a subsequent career of freedom in the All pervading God and His immense Creation for a fixed period of time and its resumption of earthly life after the expiration of that preiod constitute Salvation.

(13) The means of salvation are the worship of God, in other words, the practice of yoga. the performance of righteous deeds. the acquisition of true knowledge by the practice of Brahmacharya, the society of the wise and the learned, love of true knowledge, purity of thought, a life of activity and so on.

(14) The righteously acquired wealth alone constitues **Artha,** While that which is acquired by foul means is called Anartho.

(To be complited in next issue)

A DIALOGUE WITH THE YOUTH

(Today English has become the common language of the youth. Hindi magazines & books hardly they read. We are starting this feature to address our youth so that they can also understand and follow Vedic-life-style & grow into winners in life & not loosers or stranded- Editor)

You ! young boys & girls, aspirants of finacial success & position in society, we are with you always and whole heartedly we support your strife and attention towards a proper place in the social strata and for safe & proper means of economic freedom. But please, my young friends, have no apprehensions about it. Your aims can be fullfilled under some straight forward conditions and a well groomed methodology.

Our Vedic culture & Vedic guideline can help & assist you in your noble aims with 100% result oriented action-plan. Vedas are not religious in the popular & mistaken sense of the word. These are practical books. What our ancient men of knowledge say for a successful & joy-filled life, read the following carefully and engrave them deep into your mind & psychic :

(1) Ever growing psycho-somatic health. (2) Constantly enthusiastic approach. (3) A groomed habit of quick-action with fast decision-making mentality. (4) Proper learning with care & prepare for the work which is being taken. (5) Concentration & absolute attention to the goal to be achieved. (6) Dare & risk taking attitude (7) Gratefullness (8) A friend-making conversational art. (9) Sincere service instead of only profit & pleasure attitude. (10) Faith in the almighty, omnipotent power which can always change your bad possibilities into good potentials.

—Gyanchandra
A friend indeed.

(Questions of youth are welcome on their psychological, Psycho-spiritual & Physical problems - Editor)

(Next Month "How Veda can be helpful to make you most Modern & Progressive

फेक्स : (०२७७४) २३८७६ ओ३म् दूरभाष : (०२७७४) ७७२१७
E-Mail Add : acs_acharya@hotmail.com (०२७७४) ७७७१७

स्वामी सत्यपति परिव्राजक

सार्वजनिक अभिनन्दन समारोह

कार्तिक
शुक्ला—१३
विक्रम संवत्
२०५६

२१ नवम्बर
१९९९
प्रातः काल
९.०० बजे

स्वामी सत्यपति जी परिव्राजक (व्याकरण, निरुक्त, दर्शनाचार्य, वेद-वाचस्पति, योग-निष्ठ) का ५१ लाख रुपयों से सार्वजनिक अभिनन्दन किया जायेगा।

यह राशि पू. स्वामी जी के शिष्यों, भक्तों, प्रसंशकों, श्रद्धालु, धार्मिक सज्जनों द्वारा एकत्रित करके भेंट की जायेगी। इस राशि का प्रयोग पू. स्वामी जी द्वारा स्थापित तथा निर्देशित वानप्रस्थ साधक आश्रम के भव्य ध्यानमंदिर, प्रवचनागार, यज्ञशाला, भोजनालय, अतिथिकक्ष आदि के निर्माणार्थ किया जायेगा। इच्छुक व्यक्ति धन संग्रह के लिए बनाये गये विशेष कूपन तथा रसीद बुक मंगवा सकते हैं।

(दान राशि पर ८० जी. के अन्तर्गत आयकर मुक्ति की सुविधा मिलेगी।)

समारोह स्थल

दर्शन योग महाविद्यालय, आर्य वन, रोजड,

पो. सागपुर, जि. साबरकांठा (गुजरात) पिन — ३८३ ३०७

निवेदक : ज्ञानेश्वरार्य :
कृते वानप्रस्थ साधक आश्रम के न्यासी तथा अभिनन्दन समिति के सदस्य गण।

समाचार दर्शन

स्थापना शताब्दी समारोह आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यप्रदेश व विदर्भ

नागपुर। आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यप्रदेश व विदर्भ की स्थापना शताब्दी महोत्सव दि० ४-५-६ फरवरी' २००० को नागपुर महानगर में मनाया जाएगा। इस अवसर पर विश्व शान्ति यज्ञ के साथ अन्य अनेक राष्ट्रीय एवं सामाजिक जन जागरण के सम्मेलन आयोजित किये जा रहे हैं। इस अवसर पर उच्च कोटि के संन्यासी, मनीषी, विद्वान और राष्ट्रीय नेताओं के पधारने की स्वीकृति मिल चुकी है।

पुनः वैदिक धर्म में

बैतूल। विगत दिनों आर्य समाज बैतूल में हनीफ खाँ, उम्र २२ वर्ष निवासी खण्डवा ने मुस्लिम मत त्याग कर स्वेच्छा से वैदिक धर्म (हिन्दु धर्म) स्वीकार किया।

आर्य समाज बैतूल के आर्य पुरोहित विजय आर्य "स्नेही" के पुरोहित्व में शुद्धि संस्कार व नामकरण संस्कार कर उक्त युवक का नाम अनिल आर्य दिया गया एवं वैदिक धर्म की दीक्षा दी। आर्य पुरोहित श्री विजय आर्य ने विदिशा जिले में आई बाढ़ से पीड़ितों की सहायता का आर्यजनों से आह्वान् किया। प्रचार मंत्री

आर्य समाज बैतूल (म.प्र.)

आर्यसमाज — निर्वाचन

आर्यसमाज कविनगर, गाजियाबाद

प्रधान — डॉ. सूर्य प्रकाश विद्यालंकार
मन्त्री — श्री सुभाष सिंहल
कोषाध्यक्ष — श्री विजय कुमार मित्तल

आर्यसमाज, सासनी, अलीगढ़

प्रधान — श्री प्रेम प्रकाश आर्य
मन्त्री — श्री सुरेश चन्द्र आर्य
कोषाध्यक्ष — श्री सियाराम शर्मा

आर्यसमाज शाहपुरा, भीलवाडा, राजस्थान

प्रधान — श्री बंशी लाल सोनी
मन्त्री — श्री रामकृष्ण छाता
कोषाध्यक्ष — श्री सत्यनारायण छीपा

आर्यसमाज पूंजला, जोधपुर

प्रधान — श्री नेमीचन्द आर्य
मन्त्री — श्री ब्र. दिनेश आर्य
कोषाध्यक्ष — श्री शिवराम आर्य

आर्य समाज अन्धेरी, पश्चिमी, बम्बई

प्रधान — श्री अरुण अबरोल
मंत्री — श्री सुभाषचन्द्र आर्य
कोषाध्यक्ष — श्रीमती यशी आर्या

आर्य समाज केराकत जौनपुर उत्तरप्रदेश

प्रधान — श्री महेशनरायन आर्य
मंत्री — श्री मिश्री लाल आर्य
कोषाध्यक्ष — श्री ओम प्रकाश आर्य

तहसील आर्य सभा तिलहर, शाहजहांपुर

प्रधान — श्री जगदीश चन्द्र आर्य
मंत्री — श्री योगेन्द्रपाल आर्य
कोषाध्यक्ष — श्री रामसरन लाल आर्य

आर्य समाज मुंबई

मुम्बई। आर्य समाज मुंबई की १२४वीं वार्षिक सर्व साधारण सभा में आगामी वर्ष के लिए पदाधिकारी सर्वसम्मति से निर्वाचित हुए। श्री डॉ. अश्विनभाई व. पटेल, (मैनेजिंग ट्रस्टी), श्री अनिल सी. नेस्टी (ट्रस्टी), सुश्री डॉ. ज्योत्सनाबेन महेश्वरी (ट्रस्टी), श्री झाऊलाल शर्मा (प्रधान), श्री करसनदास जे. राणा (उपप्रधान), श्री देवेश्वर शर्मा (उपप्रधान), श्री राजेन्द्रनाथ पाण्डे (मंत्री), श्री केवलभाई एन. मकवाणा (उपमंत्री), श्री केशवलाल एल. सराव्या (कोषाध्यक्ष)।

वैदिक भक्ति सत्संग

दिल्ली। आर्य समाज मुखर्जी नगर (पूर्वी) में १७ अक्तूबर को कार्नर पार्क, निकट एन-२९, मुखर्जी नगर (बत्रा सिनेमा के पीछे) दिल्ली में वैदिक भक्ति सत्संग का आयोजन किया गया। जिसमें आर्य विद्वानों ने वेद के ज्ञान पर विस्तार से प्रकाश डाला।

भव्य ऋषि मेला

अजमेर : इस वर्ष भी दीपावली के शुभ अवसर पर ११६वां ऋषि निर्वाण समारोह आनासागर के सुरम्य तट पर स्थित ऋषि उद्यान में १२, १३, १४ नवम्बर १९९९ को उत्साह पूर्वक मनाया जा रहा है। इस अवसर पर आर्यजगत् के मूर्धन्य संन्यासी विद्वान्, भजनोपदेशक एवं नेतागण पधार रहे हैं। जिनमें सर्वश्री स्वामी धर्मानन्द जी महाराज, संस्थापक गुरुकुल आबूपर्वत, स्वामी सुमेधानन्द सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली, श्री ओमप्रकाश जी झंवर आर्यसमाज ब्यावर, श्री आत्मबोध जी सरस्वती, आर्यवानप्रस्थ आश्रम ज्वालापुर, आचार्य हरिदेव जी संचालक गुरुकुल गौतम नगर दिल्ली, पं. विद्यासागर शास्त्री अलवर, डा. सुरेन्द्र कुमार झज्जर, डॉ. भवानीलाल भारतीय, प्रो. राजेन्द्र जिज्ञासु अबोहर, श्री मामचन्द आर्य हरिद्वार, प्रो. शेरसिंह जी पूर्व केन्द्रीय राज्य मंत्री भारत सरकार, श्री तपेन्द्र जी वेदालंकार, श्री मित्रसेन आर्य रोहतक, कैप्टन देवरत्न आर्य, डॉ. सोमदेव जी बम्बई, श्री पी.एल. चतुर्वेदी, कुलपति, महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर, प्रसिद्ध उद्योगपति सुशील कुमार जी पूना, रामचन्द्र बेंदा सांसद, श्री सोमपाल शास्त्री पूर्व कृषि राज्य मंत्री, भारत सरकार, आदि महानुभाव सम्मिलित हैं।

ऋषि मेले के अवसर पर यजुर्वेद पारायण महायज्ञ ९ नवम्बर से प्रारम्भ होगा। पूर्णाहुति १४ नवम्बर प्रातः सम्पन्न होगी। इस वर्ष वेद गोष्ठी का विचारणीय बिन्दु है- वेद और ज्योतिष तथा आर्य युवक सम्मेलन भी रखा गया है।

क्या आपने अपना वार्षिक शुल्क भेज दिया है ?

जनज्ञान कोई व्यावसायिक पत्रिका नहीं अपितु वैदिक विचारधारा का एक सशक्त प्रवक्ता मासिक है ! आर्थिक और वित्तीय अभावों को झेलकर भी अपने कृपालु पाठकों अर्थात् आप सबके सक्रिय सहयोग से ही लगभग पैंतीस वर्ष से इसका सतत प्रकाशन संभव हुआ है। हमें आप सब के सहयोग पर इसलिए भी सहज भाव से ही गर्व है कि इस अवधि में ऐसा प्रसंग कभी भी नहीं आया कि जब जनज्ञान का अंक प्रकाशित नहीं हुआ है।

आपका सहयोग ही हमारी पूंजी है। एक मास पूर्व ही जनज्ञान कार्यालय से शुल्क समाप्ति की सूचना भेज दी जाती है। यथाशीघ्र, शुल्क समाप्ति की अवधि से पूर्व अपना वार्षिक शुल्क अस्सी (८०) रूपये कार्यालय को भेजकर अपने प्रिय मासिक के प्रकाशन में सहयोग दीजिए।

वी. पी. भेजने में डाक व्यय सहित २२ रु० अधिक व्यय पड़ जाता है। अत: शुल्क मनिआर्डर द्वारा ही भेजें। दिल्ली के चैक भी जनज्ञान के नाम से भेज सकते हैं। धन भेजते समय अपना सदस्य नं. अवश्य लिखें—

कम से कम जनज्ञान का एक नया सदस्य बना कर इस धर्म प्रचार कार्य में सहयोग अवश्य करें।

५०१ रू. में आजीवन सदस्य बने तथा २०१ रु. का उपहार साहित्य प्राप्त करें

"जन-ज्ञान" प्रसार अभियान में योगदान ऋषि भक्तों-हिन्दुत्वनिष्ठों से आह्वान

- 'जनज्ञान मासिक' मात्र एक पत्रिका ही नहीं अपितु आन्दोलन है।
- राष्ट्रद्रोही तत्वों के षडयन्त्रों का भण्डाफोड़ और राष्ट्रभक्तों को सुस्पष्ट समर्थन ही हमारी नीति है।
- देव दयानन्द की विचारधारा का प्रचार-प्रसार हमारा संकल्प है।
- "सत्य के अर्थ" का प्रकाश हमारा व्रत है।
- वैदिक संस्कृति और हिन्दुत्व की मानव-कल्याणकारिणी विचारधारा के हम प्रसारक हैं।
- राष्ट्र की एकता और अखण्डता तथा सुरक्षा के लिए जन-जागरण ही हमारा कार्यक्रम है।
- "जनज्ञान" व्यवसायिक नहीं एक वैचारिक मासिक पत्रिका है। वार्षिक शुल्क ८० रुपये है। आजीवन ५०१ रु० है।
- अपने प्रतिष्ठान का विज्ञापन देकर हमारा सहयोग करें।

आपका सहयोग ही जनज्ञान का सम्बल है। हमारा आप सब कृपालु पाठकों से आह्वान है कि राष्ट्रनिर्माण के इस अनुष्ठान को गतिमान रखने के लिए अपने सहयोग का हाथ और बढ़ायें। जनज्ञान को घर-घर में पहुँचाकर वैदिक संस्कृति और हिन्दुत्वनिष्ठा का प्रकाश फैलाएं।

अपने नगर में जनज्ञान की एजेन्सी स्थापित करें। नियम पत्र मंगायें।

अध्यक्ष, दयानन्द संस्थान, २२८६ आर्य समाज मार्ग, करोल बाग, नई दिल्ली-११०००५

Groversons

ग्रोवर सन्स

के उत्कृष्ट उत्पादन
क्वालिटी एंव डिजाईनों
में सर्वोत्तम

Sparsh BRA
स्पर्श ब्रा

श्वेता ब्रा
Shvaita BRA

सरिता ब्रा
Sarita BRA

Shalini BRA
शालिनी ब्रा

सुनैना ब्रा
Sunaina BRA

Groversons
Paris Beauty
ग्रोवर सन्स
BRA

ब्रा • पैन्टी • अन्डरवियर • बनियान ब्लूमर
• बेबी पैन्टीज • शमीज

भारत के सभी प्रान्तों की पसन्द का केन्द्र

सेल डिपो: **चमन लाल एन्टरप्राइज़िज़**
गली नः 2, अजमल खाँ रोड, करोल बाग, नई दिल्ली-110005
दूरभाष : 5744886-5729224

प्रभावशाली धार्मिक साहित्य

1.	चारों वेदों का हिन्दी भाष्य	मूल्य	1600/-
2.	सामवेद : आध्यात्मिक भाष्य		200/-
3.	वेद ज्योति चारों वेदों के चुने हुये (100-100 मन्त्रों की व्याख्या)		45/-
4.	वेदांजलि : (वर्ष के 365 दिनों के लिए 365 वेद मंत्रों की व्याख्या)		80/-
5.	भारत के वीर बच्चों की कहानियां		8/-
6.	धरती का स्वर्ग		8/-
7.	सरस्वतीन्द्र जीवन (दयानन्द का जीवन चरित्र)		50/-
8.	महर्षि दयानन्द सरस्वती (जीवन परिचय)		12/-
9.	धर्म का सार (धर्म का रहस्य बताने वाली कथाएं)		8/-
10.	स्वामी श्रद्धानंद सरस्वती (जीवन परिचय)		6/-
11.	वैदिक सम्पत्ति		151 /-
12.	धर्म का मार्ग (धर्म के दस लक्षणों की सरल व्याख्या)		8/-
13.	योगासन		6/-
14.	योग और ब्रह्मचर्य		8/-
15.	VEDIC PRAYER Sandhya, Havan (अंग्रेज़ी व हिन्दी अर्थ सहित)		30/-
16.	Inside the Congress		50/-
17.	Life and Teachings of Swami Dayanand		200/-
18.	The History of the Assassins		50/-
19.	Concept of God		50-
20.	श्रीमद्दयानन्द प्रकाश		60/-
21.	Light of Truth		150 /-
22.	प्रकृति और सर्ग (आचार्य उदयवीर शास्त्री)		10/-
23.	वैदिक गीता का सरल हिन्दी भाष्य		60/-
24.	संक्षिप्त महाभारत		50/-
25.	संक्षिप्त रामायण		15/-
26.	ऋग्वेद शतकम		8/-
27.	चतुर्मास की चार पूर्णिमाएं		25/-
28.	सत्संग पद्धति		5/-
29.	वैदिक सान्ध्य गीत		8/-
31.	वीर सावरकर - संक्षिप्त जीवन परिचय		5/-
32.	मोपला (उपन्यास) - वीर सावरकर		8/-
33.	वृहत्तर भारत		200/-
34.	भाई परमानन्द (जीवन परिचय)		30/-
35.	गायत्री मन्त्र चार्ट, हिन्दी व्याख्या सहित दोनों और पत्ती लगा, कम से कम दस प्रति मंगवायें		4/- रू.1

हिन्दू धर्म रक्षक साहित्य बांटिये

1.	क्या आप सारा भारत दारूल इस्लाम बनने देंगे।	1.00
2.	हिन्दुओं को चेतावनी- वेदभिक्षु:	1.00
3.	भारत के मुसलमानों का क्या करें- वेदभिक्षु:	1.00
4.	हम सब हिन्दू हैं -वीर सावरकर	1.00
5.	इस्लाम में क्या है ? -"राकेशरानी"	1.00
6.	इस्लामिस्तान बनाने की तैयारियां -जहीर जियाजी	1.00
7.	हिन्दू जागो ! देश बचाओ	1.00
8.	इस्लाम् - एक परिचय	1.00
9.	पोप की सेना का भारत पर हमला -वेद भिक्षु:	1.00
10.	पादरियों को चुनौती	1.00
11.	बाईबल की चुनौती	1.00
12.	क्या ईसा खुदा का बेटा था ?	1.00
13.	और पादरी भाग गया	1.00
14.	हमने इस्लाम क्यों छोड़ा ?	1.00
15.	क्या भारत का एक और विभाजन होगा ।	1.00
16.	हिन्दू राष्ट्र के नाम मां का संदेश।	100
17.	हिन्दू जागेगा, देश का संकट भागेगा।	1.00
18.	A Challange to the Christian Faith	1.00
19.	जनज्ञान का 'सावरकर विशेषांक'	8.00

100 रू. से अधिक साहित्य पर कमीशन 15 प्रतिशत 300रू से अधिक लेने पर 20 प्रतिशत तथा 500 रु. से अधिक लेने पर 25 प्रतिशत होगा।

* * *

एक रूपये वाली "हिन्दू धर्म रक्षक" साहित्य की 1000 पुस्तकें मंगाने पर 50 प्रतिशत कमीशन है।

* * *

प्रत्येक आदेश के साथ सम्पूर्ण अथवा कम से कम चौथाई धन अग्रिम अवश्य भेजें।

व्यवस्थापक -दयानंद संस्थान

२२८६- आर्य समाज मार्ग, नई दिल्ली -५,

दूरभाष - ५७२४७४१, ५८१५४५७

जन-ज्ञान (मासिक) वेद मन्दिर—
महात्मा वेदभिक्षु : सेवाश्रम लेखरामनगर
(इब्राहीमपुर) पो. आ. मुखमेलपुर, दिल्ली- ३६

मार्गशीर्ष – संवत् – २०५६
नवम्बर -- १९९९

Posted at N.D. PSD on
Date 5 & 6- Delhi Postal
Registration No DL-11185/99
R.N. 10719.65

ओ३म्

जो भी है हिन्दू का घर, गूंजे वहां वेद का स्वर

परमात्मा की अमरवाणी

चारों वेदों का हिन्दी भाष्य

लागत मूल्य -१६००/- रु.
अभी लेने पर -१२००/- रु.

☆ ☆ ☆

(मन्त्र-शब्दार्थ-छन्द-स्वर देवता आदि सहित
२३x३६ से. मी. साइज में पृष्ठ २२००
बढ़िया सुनहरी जिल्दें। वजन लगभग ८ किलो
आज ही अपने तथा अपने मित्र परिवारों में लायें।

☆ ☆ ☆

श्रेष्ठ बढ़िया पेपर पर ३०००/- रु. अब २२५०/- रु. में प्राप्त करें

आदेश के साथ सम्पूर्ण अथवा ½ धन अग्रिम भेजें।

व्यवस्थापक : दयानंद संस्थान, २२८६ आर्य समाज मार्ग करोल बाग नई दिल्ली -५
दूरभाष :- ५७२४७४१, ५८१५४५७
प्रधान कार्यालय : महात्मा वेदभिक्षु: सेवाश्रम, वेदमन्दिर, इब्राहीमपुर, दिल्ली - ३६
दूरभाष :- ७२०२२४९